आर.एन.आई. नं. 3653/57
डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-018/2006-08

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

नमस्कार महामंत्र

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्वसाहूणं ॥
एसो पंच णमोक्कारो,
सव्व-पावप्पणासणो,
मंगलाणं च सव्वेसिं,
पढमं हवइ मंगलं ।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल जयपुर

वर्ष : 63 मूल्य 10 रु. अंक : 8.
15 अगस्त, 2006 श्रावण, 2063.

अनगिनत व्हरायटीज्,
शुद्धता और
वाजिब हिसाब का
सुनहरा संगम

त्यौहार, शुभ प्रसंग
के आनंद को
द्विगुणीत करनेवाले
मंगल आभूषण

भारतवर्ष का स्वर्णतीर्थ

३५ वर्षोंसे तत्पर
एवं विनम्र सेवा
ग्राहकों की जिज्ञासा को
पूरा समाधान

ॲन्टीक, ऑक्साइड
जी बी, कास्टींग, कुंदन
पोलकी इ. गहनों के
अनेकों प्रकार

कॅरेटोमीटर की उपलब्धता

जलगावमें विशेष निवास व्यवस्था

औरंगाबाद :
आकाशवाणी चौक,
जालना रोड,
☎ ०२४०-३०९७९७९

रतनलाल सी. बाफना ज्वेलर्स

सोना • चांदी • हिरा • मोती

जलगांव :
नयनतारा,
सुभाष चौक
☎ ०२५७-२२२५९०३

जिनवाणी हिन्दी-मासिक

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी'।।

卐 **संरक्षक**
अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
घोड़ों का चौक, जोधपुर (राज.), फोन नं. 2636763

卐 **संस्थापक**
श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

卐 **प्रकाशक**
प्रेमचन्द जैन, मंत्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
दुकान नम्बर 182–183 के ऊपर, बापू बाजार,
जयपुर-302003 (राज.),
फोन नं. 0141–2575997, फैक्स–0141–2570753

卐 **सम्पादक**
डॉ. धर्मचन्द जैन, एम.ए., पी-एच.डी.
3 K 24–25, कुड़ी भगतासनी हाउसिंग बोर्ड
जोधपुर- 342005, फोन नं. 0291–2730081

卐 **सह-सम्पादक**
नौरतन मेहता, जोधपुर

卐 **भारत सरकार द्वारा प्रदत्त**
रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
डाक पंजीयन सं.RJ/JPC/M-018/2006-08

卐 **सदस्यता**
स्तम्भ सदस्यता-रू.11000/– संरक्षक सदस्यता-रू.5000/–
वार्षिक सदस्यता- रू. 50/– त्रिवर्षीय सदस्यता- रू.120/–
आजीवन सदस्यता देश में - रू. 500/–
विदेश में- 100$ (डॉलर)
इस अंक का मूल्य रू. 10/–

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

अभू जिणा अत्थि जिणा,
अदुवा वि भविस्सई।
मुसं ते एवमाहंसु,
इइ भिक्खू न चिंतए।।
- उत्तराध्ययन सूत्र २.४५

हुए कई जिन, वर्तमान हैं,
और कई आगे होंगे।
कहने वाले मिथ्या कहते,
यों कभी नहीं मुनि सोचेंगे।।४५।।

अगस्त २००६
वीर निर्वाण संवत् २५३२
श्रावण २०६३

वर्ष ६३ अंक ०८

मुद्रक : दी डायमण्ड प्रिण्टिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन: 2562929

ड्राफ्ट 'जिनवाणी' जयपुर के नाम बनवाकर प्रकाशक के उपर्युक्त पते पर प्रेषित किया जा सकता है।

नोट : यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो ।

विषयानुक्रम

अमृत-चिन्तन-	आगम-वाणी	-संकलित	८
	विचार-वारिधि	-आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.	९
प्रवचन-	सम्यग्दर्शन : जीवन का सम्यक् दृष्टिकोण	-आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा.	१०
	गंगा में अस्थि-विसर्जन : मुक्ति का हेतु नहीं	-उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा.	१९
वैचारिक लेख-	स्वतंत्रता का अर्थ	-आचार्य श्री देवेन्द्रमुनि जी म.सा.	२०
	मैत्री भावना सबके प्रति	-श्री राजमल सिंघी	२४
	वर्तमान शिक्षा प्रणाली में नैतिक शिक्षा की आवश्यकता	- डॉ. रजनीश शुक्ला	३९
शोधालेख-	चन्द्रगुप्त मौर्य और जैन धर्म	-डॉ. एन.के. शर्मा	२९
पर्युषण विशेष-	वक्तृत्व कला के सूत्र	-डॉ. दिलीप धींग	३५
	खमाऊँ सा...!	-श्री चन्द्रेश भण्डारी	४५
धारावाहिक-	जम्बूकुमार (३१)	-जैन दिवाकर श्री चौथमल जी म.सा.	५५
तत्त्वज्ञान-	दशवैकालिक सूत्र का जानें हम मर्म (११)	- संकलित	४८
	आओ मिलकर ज्ञान बढ़ाएँ (३३)	- श्री धर्मचन्द जैन	५२
नारी-स्तम्भ-	संस्कारों की खाद : जीवन की बुनियाद	-साध्वी नगीना श्री जी	५९
उपन्यास-	सिद्धगिरि का यात्री (२)	-उपाध्याय श्री केवलमुनिजी म.सा.	६१
युवा-स्तम्भ-	क्यों टूटते-बिखरते हैं परिवार?	-श्री पदमचन्द गाँधी	६६
बाल-स्तम्भ-	भोजलिप्सा	-डॉ. राजेन्द्र मुनि	७०
स्वास्थ्य-	भोजन और अध्यात्म	-श्री चंचलमल चोरडिया	७५
प्रेरक प्रसंग-	लक्ष्य क्या?	-आचार्य श्री विजयरत्नसुन्दरसूरि जी	४७
विचार-	नमस्कार मर्मस्पर्शी	-पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजय जी	३८
	फूल से सीखें आदर्श जीवन	-श्री जशकरण डागा	८२
कविता/गीत-	सच्चा मार्ग संयम का	-मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा.	२३
	नर नारायण बन जायेगा	-श्री सुमतिमुनि जी म.सा.	२८
	क्षमापना के पद्य	-श्री संदीप फाफरिया	५८
सम्पादकीय -	डॉ. धर्मचन्द जैन		५
स्वाध्यायी परिचय-	श्री माणकचन्द गादिया-चालीसगाँव	-श्रीमती मोहनकौर जैन	८१
नूतन साहित्य-	डॉ. धर्मचन्द जैन		८३
समाचार-विविधा-	कार्यकारिणी बैठक सूचना		८०
	समाचार-संकलन		८५
	साभार-प्राप्ति-स्वीकार		१०४

सम्पादकीय

भ्रूण हत्या का दंश

❖ डॉ. धर्मचन्द जैन

उदयपुर की फतहसागर झील में २ अगस्त २००६ को तीन कन्या भ्रूण तैरते हुए पाये गये। इसी प्रकार भरतपुर में एक दम्पती कन्या भ्रूण को थैले में छिपाकर ले जा रहा था। राजस्थान एवं विभिन्न प्रान्तों में कन्या भ्रूण की जाँच पर सरकारी तौर पर रोक लगाई हुई है फिर भी चोरी-छिपे इस तरह की वारदातों का होना अभी भी जारी है। गुजरात से भी कुछ दम्पती जाँच कराने के लिए राजस्थान के डूंगरपुर, बांसवाड़ा जिलों में आते है, ऐसी सूचना समाचार पत्रों में प्रकाशित हुई है।

भ्रूण हत्या को सभी धर्म पाप समझते हैं। हिन्दू धर्म हो या ईसाई धर्म, बौद्ध धर्म हो या जैन धर्म, मुस्लिम धर्म हो या यहूदी धर्म किसी भी धर्म में भ्रूण हत्या का समर्थन नहीं है। अपितु इसे नृशंस कोटि में रखा गया है।

भ्रूण हत्या अपनी ही सन्तान की हत्या है। सन्तान का जन्म होने के पश्चात् जहाँ उसके पालन-पोषण एवं औषधि आदि में हम कोई कसर नहीं छोड़ते, डॉक्टर से यदि कोई भूल हो जाए तो हम उसको दोषी ठहराकर उस पर चढ़ बैठते हैं, वहाँ उसका जन्म होने के पूर्व स्वयं ही मौत के घाट उतारने को तैयार हैं। कैसा लज्जाजनक एवं अविवेकपूर्ण निर्णय है हमारा।

ऐसा नहीं है कि जन्म के पश्चात् ही जीवन प्रारम्भ होता है या उसमें जीव आता है, अपितु गर्भावस्था में भ्रूण का विकास ही उसमें जीवत्व का सूचक है। जिस क्षण जीव का वहाँ आगमन होता है उसी क्षण गर्भ का विकास प्रारम्भ होता है। गर्भस्थ मनुष्य एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय नहीं, अपितु पंचेन्द्रिय जीव होता है। वह हमें चक्षुगोचर नहीं होता इसलिए उसके प्रति दया, करुणा का भाव अथवा मोह-ममत्व का भाव प्रबल नहीं होता, किन्तु यह तो मानना ही होगा कि हमारा भी जन्म होने के पूर्व हम भी इसी प्रकार गर्भ में विकसित हुए थे। हमें जिस प्रकार हमारा जीवन प्रिय लगता है ठीक उसी प्रकार गर्भस्थ शिशु को भी जीवन प्रिय है। माता-पिता कैसे अपनी ही संतान की हत्या के लिए तत्पर हो जाते हैं, यह आश्चर्यजनक अवश्य लगता है, किन्तु उनका अज्ञान, व्यक्तिगत समस्याएँ एवं सामाजिक वातावरण इसमें दोषी है।

कन्या भ्रूण हत्या के कई कारण हो सकते हैं, यथा- १. पारम्परिक विकृत

सोच २. अवैध संबंधों के उजागर होने का भय ३. सामाजिक वातावरण ४. सरकारी योजनाओं की विसंगति ५. दहेज प्रथा की विभीषिका ६. आर्थिक समस्याएँ आदि।

सरकारी योजनाओं के कारण 'परिवार नियोजन' के सिद्धान्त को सामाजिक स्तर पर स्वीकार कर लिया गया है। आज से ४० वर्ष पूर्व जहाँ अधिक संतान वाले परिवार को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था वहाँ अब दो-तीन सन्तान से अधिक होने पर उस परिवार को हीन दृष्टि से देखा जाता है।

सामाजिक वातावरण भी व्यक्ति को भ्रूण हत्या के लिए तैयार करता है। सामाजिक दबाव के कारण व्यक्ति दो या तीन से अधिक संतान रखना नहीं चाहता है, आर्थिक समस्या भी इसमें कारण हो सकती है। अतः जब एक पुत्री हो जाय तो वह चाहता है कि दूसरी सन्तान पुत्र हो। अब दूसरी सन्तान पुत्र नहीं होती है तो वह पुरुष संतान की चाह में कन्या भ्रूण की हत्या के लिए मन बना लेता है। कुछ वर्षों पूर्व तो खुले रूप में लिंग परीक्षण की सुविधा प्राप्त थी कि भ्रूण स्त्री है या पुरुष। सैकड़ों की संख्या में ऐसे क्लिनिक खुल गए थे जो लिंग का परीक्षण कर रिपोर्ट देने लगे। गर्भपात पर राज्य सरकार की रोक न तब थी और न अब। इसलिए धड़ल्ले से कन्या भ्रूण की एवं अनचाहे भ्रूण की हत्या चल रही थी।

जब सरकार का ध्यान इस ओर गया कि इससे देश में पुरुष सन्तानों के मुकाबले स्त्री-सन्तान की संख्या तेजी से घट रही है तो लिंग परीक्षण पर कानूनी रोक लगा दी गई। अब जो लिंग परीक्षण होते हैं वे चोरी छुपे होते हैं। पता चलने पर कैद व जुर्माने की सजा है। सरकार ने लिंग परीक्षण पर रोक लगाकर तो अच्छा किया, किन्तु गर्भपात पर अभी तक कोई रोक नहीं है। धार्मिक दृष्टि से भ्रूण हत्या पाप है, किन्तु नैतिक दृष्टि से भी इस पर रोक लगनी चाहिए। माता के जीवन-मृत्यु के संघर्ष में अथवा अन्य ऐसी आपवादिक स्थिति में गर्भपात की सुविधा सरकार भले ही दे, किन्तु सामान्य गर्भपात की सुविधा जो जनसंख्या नियंत्रण की दृष्टि से दी हुई है उस पर रोक लगना आवश्यक है।

अभी हरियाणा प्रान्त के एक गांव में ४ वर्ष के बालक प्रिंस को बचाने में सरकार ने जो मुस्तैदी दिखाई तथा धन-व्यय किया वह निश्चित ही एक उदाहरण है जो जीवनरक्षा के लिए सरकार के संकल्प को व्यक्त करता है। फिर प्रश्न यह है कि गर्भपात एवं भ्रूणहत्या जैसे घिनौने कार्य को नियन्त्रित कर सरकार गर्भ में पल रहे जीवों की रक्षा के लिए कदम क्यों नहीं उठाती? गर्भस्थ भ्रूण ही तो शिशु एवं बालक के रूप में विकास को प्राप्त करता है।

भ्रूण हत्या में कितना घिनौना कृत्य होता है, इसकी अब फिल्में/कैसेट भी बनी हैं। जो इन्हें देख लेता है, उसका हृदय निश्चित ही दहल उठता है। भ्रूण के १६ सप्ताह से अधिक का होने पर जहरीला रसायनयुक्त इंजेक्शन लगाया जाता है जिससे भ्रूण एक घंटे में मर जाता है। १८ सप्ताह के भ्रूण को नुकीली कैंची से नोंचकर या काटकर निकाला जाता है। इस प्रकार अनेक विधियों से भ्रूण को नष्ट किया जाता है। एक खास दवा का इस्तेमाल करने से भ्रूण तेजी से बाहर आ जाता है। भ्रूण हत्या निश्चित ही अमानवीय कृत्य है एवं मानवता के नाम पर कलंक है।

हिन्दू संस्कृति के ग्रन्थों में यह नहीं कहा गया कि कन्या का जन्म अशुभ या हेय है। अपितु मनुस्मृति आदि ग्रन्थों में पुत्र एवं पुत्री को समान आदर से देखने का कथन है। स्त्री की सर्वविध सुरक्षा के प्रावधानों का भी वहाँ उल्लेख है। स्त्री को विवाह आदि में प्राप्त धन को 'स्त्री धन' कहा गया है। 'स्त्री धन' पर प्रमुखतः स्त्री का अधिकार होता है। उसकी मृत्यु के पश्चात् भी उस धन पर पुत्री का प्रथम अधिकार होता है।

इस प्रकार प्राचीन हिन्दू धर्म ग्रन्थों में स्त्री की सुरक्षा एवं आदर पर पूरा ध्यान दिया गया है। मनुस्मृति तो यहाँ तक कहती है- "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः" जहाँ नारी की पूजा की जाती है अर्थात् उसे आदर दिया जाता है वहाँ देवता रमण करते हैं अर्थात् सुख-शान्ति और समृद्धि रहती है। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि क्या पुत्र के बिना भी समाज व्यवस्था चल सकती है? तो उत्तर होगा कि आधुनिक युग में कन्याएँ भी पढ़-लिखकर पुत्रवत् दायित्वों का निर्वाह करने में समर्थ हो रही हैं। पुत्र एवं पुत्री के बीच भेदभाव पूर्ण व्यवहार में पूर्वापेक्षा कमी आई है। अब पुत्रियों के विकास पर भी उतना ही ध्यान दिया जाने लगा है जितना कि पुत्रों के विकास पर। कई बार पुत्र माता-पिता की उतनी सेवा नहीं कर पाते जितनी पुत्रियाँ कर देती हैं। कई घरानों में ऐसी भी अवस्था बनती है कि जिन पुत्रों को पढ़ाया लिखाया, वे विदेश में जा बसे और भारत में आकर माता-पिता की सेवा-शुश्रूषा का उनके पास कोई समय नहीं रहता। इसलिए पुत्रों के प्रति आकर्षण और पुत्रियों के प्रति अनाकर्षण का भाव अपने पारम्परिक सोच के अतिरिक्त कोई महत्त्व नहीं रखता। दूसरी बात यह है कि पुत्र अथवा पुत्री का जन्म अपने हाथ में नहीं है। जो अपने हाथ में नहीं है उसके लिए दुःखी एवं परेशान होना उचित नहीं।

जैन समाज की जनसंख्या पर दृष्टिपात करें तो लड़कों की तुलना में लड़कियों की संख्या तेजी से घट रही है। जैन समाज में एक हजार लड़कों पर मात्र ८७८ लड़कियाँ हैं, जो एक विचारणीय मुद्दा है। शेष भाग पेज सं. ५१ पर...

अमृत-चिन्तन

आगम-वाणी

चत्तारि केतणा पण्णत्ता, तं जहा- वंसीमूलकेतणए, मेंढविसाणकेतणए, गोमुत्तिकेतणए, अवलेहणियकेतणए।

एवामेव चउविधा माया पण्णत्ता, तं जहा- वंसीमूलकेतणासमाणा, जाव (मेंढविसाणकेतणासमाणा, गोमुत्तिकेतणासमाणा) अवलेहणियकेतणासमाणा।

१. वंसीमूलकेतणासमाणं मायमणुपविट्ठे जीवे कालं करेति, णेरइएसु उववज्जति।
२. मेंढविसाणकेतणासमाणं मायमणुपविट्ठे जीवे कालं करेति, तिरिक्खजोणिएसु उववज्जति।
३. गोमुत्ति जाव (केतणासमाणं मायमणुपविट्ठे जीवे) कालं करेति, मणुस्सेसु उववज्जति।
४. अवलेहणिय जाव (केतणासमाणं मायमणुपविट्ठे जीवे कालं करेति), देवेसु उववज्जति।

-स्थानांग सूत्र, स्थान ४, उद्देशक २, गाथा २८२

केतन (वक्र पदार्थ) चार प्रकार का कहा गया है, जैसे-

१. वंशीमूल केतनक, बाँस की जड़ का वक्रपन।
२. मेंढ्रविषाणकेतनक- मेंढ़े के सींग का वक्रपन।
३. गोमूत्रिका केतनक- चलते बैल की मूत्र-धारा का वक्रपन।
४. अवलेखनिका केतनक- छिलते हुए बाँस की छाल का वक्रपन।

इसी प्रकार माया भी चार प्रकार की कही गई है, जैसे-

१. वंशीमूल केतनसमाना-बाँस की जड़ के समान अत्यन्त कुटिल अनन्तानुबंधी माया।
२. मेंढ्रविषाण केतनसमाना- मेंढ़े के सींग के समान कुटिल अप्रत्याख्यानावरण माया।
३. गोमूत्रिका केतनसमाना- गोमूत्रिका केतनक के समान प्रत्याख्यानावरण माया।
४. अवलेखनिका केतनसमाना- बाँस के छिलके के समान संज्वलन माया।

१. वंशीमूल के समान माया में प्रवर्तमान जीव काल (मरण) करता है तो नारकी जीवों में उत्पन्न होता है।
२. मेष-विषाण के समान माया में प्रवर्तमान जीव काल करता है तो तिर्यग्योनि के जीवों में उत्पन्न होता है।
३. गोमूत्रिका के समान माया में प्रवर्तमान जीव काल करता है तो मनुष्यों में उत्पन्न होता है।
४. अवलेखनिका के समान माया में प्रवर्तमान जीव काल करता है तो देवों में उत्पन्न होता है।

विचार-वारिधि

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म. सा.

- संसारी जीव ने अपनी तूली (चित्तवृत्ति) को कभी धन से, कभी तन से और कभी अन्य सांसारिक साधनों से रगड़ते-रगड़ते अल्प सत्त्व बना लिया है। अब उसे होश आया है और वह चाहता है कि तूली की शेष शक्ति भी कहीं इसी प्रकार बेकार न चली जाए। अगर वह शेष शक्ति का सावधानी के साथ सदुपयोग करे तो उसे पश्चात्ताप करके बैठे रहने का कोई कारण नहीं है। उसी बची हुई शक्ति से वह तेज को प्रस्फुटित कर सकता है, क्रमशः उसे बढ़ा सकता है और पूर्ण तेजोमय भी बन सकता है। वह पिछली तमाम हानि की भी भरपाई कर सकता है।
- परिवार में शिक्षा देने के प्रसंग से समूह के बीच किसी की व्यक्तिगत न्यूनता नहीं कहना चाहिए।
- परिवार के मुखिया को निद्राजित् और भयजित् होना आवश्यक है। अतः यदि प्रातः एवं सन्ध्या के असमय में वह निद्रा लेने लगा तो परिवार को संभाल नहीं सकेगा और ज्ञान-श्रवण व स्वाध्याय भी नहीं होगा।
- भूमि पर रहने वाला मानव पदार्थों पर अधिकार जमाये बिना रहना सीखे तो वैर एवं संघर्ष का नाम न रहे।
- लोभवृत्ति मनुष्य की विचारशक्ति को कुंठित कर देती है, नष्ट कर देती है।
- गगन में सूर्योदय अन्तर में ज्ञानोदय की प्रेरणा करता है।
- मोह और अज्ञान के धूम्र एवं मेघावरण को दूर करने से अन्तर में ज्योति प्रकट हो सकती है।
- राग को गलाने से क्लेश-मुक्ति होती है।
- सम्यग्दर्शी परिग्रह को बंधन मानता है और मिथ्यात्वी बंदी खाने को घर मानता है। एक राग को गलाता है तो दूसरा फलाता है।
- हिंसा और परिग्रह छोड़ने से ही विश्वशांति हो सकती है।

-'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' ग्रन्थ से साभार

प्रवचन

सम्यग्दर्शन : जीवन का सम्यक् दृष्टिकोण

आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा.

सम्यग्दर्शन का दूसरा नाम सम्यक् श्रद्धा या श्रद्धान भी है। दर्शनमोहनीय एवं अनन्तानुबंधी क्रोध, मान, माया एवं लोभ का क्षय, उपशम या क्षयोपशम होने पर सम्यग्दर्शन प्रकट होता है। सम्यग्दर्शन को साधना की नींव कहा जा सकता है। इसके होने पर जीवन एवं संसार के प्रति दृष्टिकोण सम्यक् हो जाता है। आचार्यप्रवर द्वारा जोधपुर चातुर्मास में ३ सितम्बर १९९४ को प्रदत्त प्रवचन का आशुलेखन जिनवाणी के सम्प्रति सह सम्पादक श्री नौरतन जी मेहता ने किया है। *-सम्पादक*

पर्वाधिराज पर्युषण के इन आठ दिनों में कर्म-बंधन को तोड़कर आठ गुणों को प्रकट करने वाले महान् पुरुषों के चरित्र का वर्णन अन्तगड सूत्र के माध्यम से रखा जा रहा है। पर्युषण का संबंध किसी स्थान विशेष से नहीं है। न अयोध्या से, न गया से और न ही शत्रुंजय से। पर्युषण का संबंध किसी व्यक्ति से भी नहीं है। न राम से, न कृष्ण से और न महावीर से। लौकिक रीति-रिवाजों और किसी प्रसंग से भी पर्युषण का संबंध नहीं है। पर्युषण आध्यात्मिक पर्व है। पर्युषण आत्मा का पर्व है। यह पर्व प्रत्येक आत्मा के लिए है। जो भी आठ गुणों की साधना करने वाले हैं, आठ प्रमाद और आठ कर्म छोड़ने वाले हैं उन सबके लिए पर्वाधिराज पर्युषण पर्व है।

कल आठ गुणों में से पहले गुण सम्यक् ज्ञान को लेकर कुछ चिन्तन चला। जानकारी और समझ अलग है, सम्यग्ज्ञान अलग है। जानकारी बाहर से भीतर में जाती है, वहीं सम्यग्ज्ञान भीतर रहे कर्मों के बंधन टूटने से प्रकट होता है। सम्यग्दर्शन के होने पर ज्ञान स्वतः सम्यक् हो जाता है।

सम्यग्दर्शन में 'दर्शन' शब्द कई अर्थों में प्रचलित है। एक तो देखने के अर्थ में 'दर्शन' शब्द का प्रयोग किया जाता है। आप कहते भी हैं- मैं अमुक संत के दर्शन के लिए जा रहा हूँ। विशेष प्रकार की मान्यता को लेकर भी 'दर्शन' शब्द प्रयुक्त किया जाता है। यथा- जैन दर्शन, बौद्ध दर्शन, सांख्य दर्शन आदि-आदि। सिद्धान्त के रूप में भी दर्शन शब्द का प्रयोग होता है। तत्त्व के निर्णय में भी दर्शन शब्द का अर्थ समाहित है। ज्ञान के पूर्व प्रकट होने वाला सामान्य बोध भी दर्शन है,

यथा- चक्षु दर्शन, अचक्षु दर्शन, अवधि दर्शन और केवल दर्शन। वस्तु के विशेष स्वरूप को जानना ज्ञान है तो वस्तु के सामान्य धर्म को जानना दर्शन है। दर्शन अर्थात् दृष्टि। दर्शन अर्थात् विश्वास। दर्शन अर्थात् श्रद्धा। तीर्थंकर भगवान महावीर ने कहा-

नाणं च दंसणं चेव, चरित्तं च तवो तहा।
एयं मग्गमणुप्पत्ता, जीवा गच्छंति सोग्गइं॥

-उत्तराध्ययन सूत्र २८.३

मोक्ष मार्ग में जिस 'दर्शन' शब्द का प्रयोग किया जाता है उसका संबंध देव-गुरु-धर्म पर एवं जीव-अजीव आदि नौ तत्त्वों पर विश्वास को लेकर है। श्रद्धा सही भी होती है तो गलत भी हो सकती है। दृष्टि के भेद करते शास्त्रकारों ने मिथ्यादृष्टि, आसन्न दृष्टि, राग दृष्टि, द्वेष दृष्टि, सम्यक् दृष्टि आदि भेद किए हैं। दृष्टि यानी विश्वास। दृष्टि यानी श्रद्धा।

आपको विश्वास है पर जिस पर विश्वास करना चाहिये शायद उस पर विश्वास नहीं और जिस पर विश्वास नहीं करना चाहिये उस पर है। मिथ्यात्व सबसे भयंकर शत्रु है, रोग है। विपरीत दृष्टि सबसे बड़ा ज़हर है। इस मिथ्यात्व को आशीविष की संज्ञा दी जा सकती है। आशीविष जीभ पर लगते ही व्यक्ति जीवित नहीं रह सकता। दुनियाँ में अनेक तरह के ज़हर हैं। टांटिया, बिच्छू, साँप सब जहरीले जीव हैं। कभी किसी को टांटिया का डंक लग जाय तो वह ज़हर एक-दो घंटे में शांत हो सकता है। बिच्छू का ज़हर एक-दो दिन में उतर सकता है। कदाचित् किसी को साँप काट जाय और समय पर उपचार का साधन न मिले तो साँप का ज़हर व्यक्ति का जीवन समाप्त कर सकता है। किन्तु मिथ्यात्व का ज़हर सब ज़हरों से अधिक भयावह है। अन्य ज़हर अधिक से अधिक एक जन्म बिगाड़ सकता है, लेकिन मिथ्यात्व का ज़हर जन्म-जन्मान्तर तक दुःख देता है।

आज अनेकानेक रोग दिखाई देते हैं। ब्लड प्रेशर की न्यूनाधिकता का रोग कइयों में देखा जा सकता है। शूगर, टी.बी., हार्ट रोग जैसी कई बीमारियाँ हैं, लेकिन इनका उपचार है। कैंसर भी एक रोग है। कैंसर का रोग बढ़ जाय तो उपचार मुश्किल है। कैंसर का नाम सुनते ही तन-मन में भय छा जाता है, क्यों? यह रोग शरीर का नाश करने वाला है। किसी को कैंसर हो गया तो यह शरीर नष्ट हो सकता

है। कैंसर जैसे असाध्य रोग से भी खतरनाक है मिथ्यात्व। मिथ्यात्व जन्म-जन्मान्तर भटकाता है। यह एक नहीं, अनेकानेक जीवन बिगाड़ने वाला है।

आचार्य भगवन्त (पूज्य गुरुदेव श्री हस्तीमल जी म.सा.) फरमाया करते थे- "घरवालों से मत डरो। सिपाही और इन्सपेक्टर से डरने की जरूरत नहीं, दुश्मन भी सामने आकर खड़ा हो जाय तो वह दो-चार गालियाँ दे देगा, मारपीट कर देगा और हो सकता है वह जान से मार दे, लेकिन उससे भी डरने की जरूरत नहीं। हाँ, डरना है तो अपने अज्ञान-अंधकार से डरो। डरना है तो विपरीत श्रद्धा से डरो। आज तक किसी ने संसार-सागर में रुलाया है, भटकाया है तो वह है मिथ्यात्व। नरक-निगोद में ले जाने वाला है मिथ्यात्व। अगर यह मिथ्यात्व हट गया और अपने आप पर एवं तत्त्वार्थ पर विश्वास जम गया तो फिर कहीं भटकना नहीं पड़ेगा।"

इस जीव ने आज तक पराये को अपना और अपने को पराया समझा है। आज व्यक्ति-व्यक्ति की समझ में है मैं गोरा, मैं काला, मैं सेठ, मैं संन्यासी, मैं साधु, मैं श्रावक, मैं ओसवाल, मैं पोरवाल, मैं राजा, मैं मंत्री, मैं मालिक, मैं मारवाड़ी, मैं गुजराती, मैं पंजाबी आदि। आज तक यही समझ रही है। यह आत्मा क्या था, क्या है, क्या होगा इस दिशा में चिन्तन चलने के बजाय आदमी शरीर, परिवार और सुख-सुविधा के साधनों तक ही सोचता है तो समझना चाहिये, अभी सम्यक् सोच नहीं है। यह जीव न जाने कितनी बार नरक में गया, कितनी बार निगोद में गया। एकेन्द्रिय बना, देव-मानव बना, किन्तु आज तक अपने-आपको समझने की चेष्टा नहीं की। जीव विपरीत समझता रहा और विपरीत समझ के कारण विपरीत आचरण करता रहा। इस जीव को दूसरों की चिन्ता तो रही, किन्तु अपने-आपकी चिन्ता नहीं रही। मारवाड़ की कहावत है- 'घर का पूत कुँवारा डोले पाड़ोसी का फेरा।' आदमी अपना काम नहीं हो रहा है, उसे भूल रहा है और दुनियाँ भर की जिम्मेदारी ले रहा है। शरीर की, बेटे की, बहू की, पोते-पोतियों की, परिवार की जिम्मेदारी निरन्तर बढ़ती जा रही है और खून की यह ताँत कितनी विस्तार पायेगी, कहा नहीं जा सकता। हम जिन्हें अपना मान रहे हैं वे अपने नहीं हैं और जो अपना है वह भुलाई में पड़ रहा है, यह मिथ्यात्व ही तो है। इसे विपरीत समझ कह सकते हैं। इसी विपरीत समझ के कारण विनाशी को अपना मान रहे हैं और जो अविनाशी है उसे अपना मानने की समझ नहीं आई।

आज का दिन अपने-आपको समझने का दिन है। आज का दिन अपने पर श्रद्धा करने का दिन है। जिस दिन अपने-आप पर श्रद्धा हो जायेगी उस दिन ऊपर उठने में देर नहीं लगेगी। जरूरत है श्रद्धा को जगाने की। आपने सुना होगा एक भाई राम-राम जपते मरा-मरा जपता रहा, किन्तु अडोल श्रद्धा थी तो मरा-मरा जपते हुए भी पार हो गया। विशेषता शब्द में नहीं, श्रद्धा में है।

श्रद्धा है तो सब कुछ है। हजारों रुपये खर्च करके भी दवा काम नहीं करती, वहीं श्रद्धा है तो एक राख की चिमटी काम कर जाती है। बड़े-बड़े विद्वान् के बोल काम नहीं करते वहाँ श्रद्धास्पद के दो शब्द काम कर जाते हैं। सेठ ने चोर से कहा- मैं तुम्हारे लिए पानी लेकर आता हूँ तब तक तुम नमो अरिहंताणं-नमो सिद्धाणं जपना। चोर के मन में भय था वह नमो अरिहंताणं-नमो सिद्धाणं भूल गया और सेठ पर श्रद्धा के कारण 'आणु ताणु कुछ नहीं जाणुं; सेठ वचन परमाणु' बोलता रहा। शास्त्र वर्णन करता है शूली पर चढ़ने वाला चोर शूली से बच गया? वाल्मीकि डाकू हो या अंजन चोर, श्रद्धा से वे भी तिर गये। जब चोर-डाकू श्रद्धा से तिर सकते हैं तो हम क्यों नहीं तिरते? नहीं तिरने का कारण है अभी वह अटूट श्रद्धा जगी नहीं। हम अपने-आपको ऊँचा मान लें पर जब तक श्रद्धा नहीं जगेगी बेड़ा पार नहीं होगा।

आज श्रद्धा जगाने की जरूरत है। याद रखना- धन की श्रद्धा टिकेगी नहीं, तन की श्रद्धा भी काम की नहीं है। भोग-उपभोग की श्रद्धा डूबाने वाली है। हमारी सम्यक् श्रद्धा जागृत हो जाय तो फिर हमें भटकने की जरूरत नहीं है। जिस दिन सम्यक् श्रद्धान जग गया तो सारे पाप धुल सकते हैं। चोर, डाकू, हत्यारा, तश्कर भी जग सकते हैं, उनके पाप भी धुल सकते हैं तो हमारे क्यों नहीं।

जरूरत है हम भीतर में श्रद्धा जगायें, किन्तु आज प्रायः अधिकतर लोग आँखे बंद कर बाहर भटक रहे हैं। किसी को भैरूजी तो किसी को नाकोड़ा जी या किसी को केसरिया जी पर श्रद्धा है तो कोई अन्य देवी-देवता को याद कर रहा है। कितने-कितने देवी-देवता याद किए जा रहे हैं इसका कोई हिसाब नहीं है। गाँव-गाँव और नगर-नगर में देवी-देवता याद करने वाले हैं, पर देवी-देवतां कुछ दे नहीं सके। नीति की कहावत है-

टुकड़ा न आता काम में, टूटी हुई शमसीर का।
देवता भी क्या करे, फूटी हुई तकदीर का॥

तकदीर है तो माटी भी सोना बन सकती है और तकदीर नहीं तो साक्षात् खड़े देव भी कुछ देने में सक्षम नहीं हैं। तीर्थंकर भगवान् महावीर के चरणों में देवता ही नहीं, देवों के इन्द्र स्वयं प्रार्थना कर रहे हैं- भगवन्! आपके इस थोड़े से काल में उपसर्ग अधिक हैं इसलिए आप मुझे सेवा में रख लीजिये, मैं आपकी मदद करूँगा। भगवान् ने कहा- नहीं, मुझे मेरे कर्म स्वयं भोगने हैं अतः सेवा की आवश्यकता नहीं है। आपके समक्ष कोई देवता ऐसा प्रस्ताव करे तो आप क्या कहेंगे? देव की बात जाने दीजिये, कभी सपना भी आ जाय तो शायद आप फूले नहीं समायेंगे। आपने नल का दृष्टान्त सुना होगा। नल का पिता मरकर देव हुआ। वह स्वयं उपस्थित हुआ, साँप बनकर डस गया। नल को कूबड़ा बना दिया। देव बोला- नल, अभी तुझे बारह वर्ष इसी तरह रहना है। तूने कर्म ही कुछ ऐसे किए हैं। जब तक कर्म क्षय नहीं हो जाते, मैं तुम्हारी सहायता नहीं कर सकता। देवता में ताकत है पर देव भी सहायता तभी करेगा जब तकदीर साथ दे रही हो। आज कई लोग हैं जो देहली-देहली और डूंगरी-डूंगरी भटकते हैं। आप अपनी शक्ति पहचान जायेंगे, अपने-आप पर आपको विश्वास हो जायेगा, दृष्टि सम्यक् बन जायेगी तो कहीं भटकने की जरूरत नहीं है। देवता की सहायता माँगने की जरूरत नहीं।

जरूरत है दृष्टि बदलने की। वस्तु एक है पर दृष्टि नहीं बदलेगी तो वही वस्तु अनेक रूपों में दिखाई देगी। एक काँच लगा है। काँच के सामने एक भोगी जाता है वह बाल संवारेगा, चेहरा देखेगा। उसी काँच को चिड़िया देखेगी तो चोंच मारेगी। नंदीसूत्र में कहा गया है कि कोई अकेला कैसे लड़ाई करेगा? काँच का उदाहरण रखते शास्त्रकार कहते हैं कि उसके सामने भोगी रूप-लावण्य निखारेगा, वहीं चिड़िया लड़ना सीखेगी। बच्चे का हाथ काच पर गया तो वह रूप देखने के बजाय उससे खेलेगा। काँच के टुकड़े-टुकड़े कर देगा, पीस देगा और चूरा-चूरा कर देगा। कोईआत्महत्या करने वाला है तो काँच बाँट कर खा लेगा और जीवन-लीला समाप्त कर देगा। काँच है पर उसके न जाने कितने रूप हैं। वही काँच भरत देखते हैं तो केवलज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। उस काँच के महल की विशेषता देखिये एक नहीं, आठ-आठ नरेश उस महल में पुण्यशालिता के कारण केवलज्ञानी बन गये। नवमें पाट पर बैठे राजा को महल पर द्वेष आया। उसने सोचा- इस महल में जो भी जाता है वह साधु बनकर निकल जाता है अतःयह महल काम का नहीं। महल तुड़वा दिया गया।

सम्यक् दर्शन अपने-आप पर विश्वास जगाने वाला है। आत्मा और परमात्मा पर श्रद्धा जगाने वाला है। सम्यक् दर्शन बिन्दुओं के पहले आया एका है। अगर सम्यक् दर्शन का एका नहीं है तो नवकारसी, पोरसी, सामायिक, प्रतिक्रमण की चाहे जितनी बिन्दियाँ लगा लें उनका कोई महत्त्व नहीं है। नवकारसी-पोरसी, सामायिक-प्रतिक्रमण, दया-संवर, उपवास-पौषध सम्यग्दर्शन के एका होने की स्थिति में लाभदायी हैं।

सम्यक् दर्शन धर्म रूपी महल की नींव है। आप मंजिल पर मंजिल चढ़ा लें पर यदि नींव नहीं है तो एक मंजिल भी कायम नहीं रह सकती। आत्मा-परमात्मा पर विश्वास करने की नींव है सम्यक् दर्शन। सम्यक् दर्शन चारित्र रूपी महल की आधारशिला है। आपको अपने पर विश्वास है तो तिर्यंच-मनुष्य ही नहीं देवता भी डिगाना चाहे तो आप डिगेंगे नहीं। विश्वास नहीं तो आप तुरन्त डिग जायेंगे। एक भाई ने कल उपवास किया। उपवास करना सबके लिए सरल नहीं होता। किसी-किसी को रात तो क्या दिन निकालना मुश्किल हो जाता है। कइयों को उपवास भारी लगता है। उस व्यक्ति से फिर कभी कहा जाय कि आज पर्व तिथि है उपवास कर लो तो वह उपवास के बजाय सामायिक करने की बात कह जाता है। वह कह देगा- महाराज! एक नहीं मैं दो सामायिक कर लूँगा। उपवास हो अथवा सामायिक, यह भी विश्वास से पार लगती है। कई ऐसे भी मिलते हैं जो सामायिक को बंधन समझते हैं। कुछ तो कह भी जाते हैं- महाराज! घंटा भर बैठने में पाँव दर्द करते हैं। कुछ बण नहीं आने की बात कह जाते हैं। वे कहते हैं महाराज! हमें तो कोई सरल रास्ता बताओ। आप कहो तो मैं दस मिनट बैठ कर माला जप सकता हूँ। कई तो माला जपने की बात पर भी कह जाते हैं कि माला में मन नहीं लगता। प्रतिक्रमण करने की प्रेरणा की जाती है, किन्तु कई हैं जो मच्छरों के प्रकोप की बात कह कर प्रतिक्रमण से जी चुराते हैं। उन्हें समझाया जाता है- भाई! मच्छर परेशान करते हैं तो आप चद्दर ओढ़ सकते हैं। चद्दर ओढ़ना उन्हें मंजूर नहीं।वे कहते हैं ओढ़ते हैं तो गर्मी लगती है, पसीना आता है। धर्म में उन्हें दिक्कत आती है और एक-एक दिक्कत के लिए कई-कई बहाने बताने में उन्हें संकोच नहीं होता। आप धर्म कार्य में बहाने बनाते हैं, मैं पूछूँ क्या दुकान पर बैठते हैं तो पाँव नहीं दुःखते? क्या दुकान पर काम करते पसीना नहीं आता। उगाई पर जाने वालों को रास्ते की कठिनाई नहीं होती?

अज्ञान से, अश्रद्धा से, लाचारी से आदमी न जाने कितने कष्ट सहन करता है, लेकिन कर्म काटने के रास्ते पर बहाने पर बहाने गिनाता है। जिस दिन व्रत-नियम पर श्रद्धा जम जायेगी, साधना में जरूर मन लगेगा। व्रतों के महल वही खड़े कर सकता है जिसमें सम्यक् श्रद्धान है। आप कम करें, ज्यादा करें पर श्रद्धापूर्वक धर्म-साधना करेंगे तो ही लाभ होगा।

आप स्मरण-भजन, जप-तप, साधना-आराधना करते हैं, वर्षों से कर रहे हैं, फिर भी श्रद्धा नहीं है तो किया-कराया अधूरा है। श्रद्धा है तो एक नवकारसी नरक के बंधन काट सकती है। श्रद्धा के अभाव में ज्ञान-ध्यान, त्याग-तप, साधना-आराधना सब बालक के हाथ में मूल्यवान हीरे की तरह है। नादान बालक के हाथ बहुमूल्य हीरा है उसे यदि खाने के बेर दिखाये जायें तो हीरे के बजाय बेर लेने को मचलेगा। वह तो नादान बच्चा है, आप तो नादान नहीं। आप क्या पकड़ रहे हैं चिंतन करना। आपने बंदर देखा है। बंदर कभी घर में पड़ा गहना उठा ले जाता है। वह गहना लिए इधर-उधर छलांग लगाता है। आपने देख लिया कि गहना बंदर के हाथ में है। वह कहने से गहना नहीं देने वाला। बन्दर से गहना लेना है तो उसके सामने खाने की वस्तु दिखाकर देनी होगी। रोटी हो, चना-मूंगफली हो, फल हो, बंदर खाने की चीज देखते ही गहने को छोड़कर खाने की चीज लेने तत्पर हो जायेगा। बन्दर को खाना चाहिये , उसे गहने की कीमत का ध्यान नहीं।

दृष्टि अलग-अलग है। एक आसन्न दृष्टि है, एक मिथ्यादृष्टि है। एक माला जपता है, सामायिक भी करता है। वह माला या सामायिक इसलिए कर रहा है कि इसके करने से घर में शांति हो जाय। उसे शांति मिल रही है तो वह जिन्दगी भर सामायिक करने से परहेज नहीं करता। कदाचित् सामायिक करते शांति नहीं मिली तो कई हैं जो सामायिक छोड़ देते हैं। कुछ तप भी लाभ की कामना से करते हैं और लाभ के बजाय घाटा हो तो तप करना बंद कर देते हैं।

साधना चाहे जो हो वह लौकिक फल के लिए नहीं है। साधना मन के संतोष के लिए है, आत्मा की शांति के लिए है, कर्म बंधन काटने के लिए है, इन्द्रियों के विषय-कषाय शमन करने के लिए है। बुखार उतारने के लिए साधना नहीं है। चन्द चाँदी के टुकड़े मिल जायें इसके लिए भी साधना नहीं है। आसन्न दृष्टि से कभी कुछ लाभ मिला तो करने वाला तेला कर जाता है। लाभ की स्थिति में एक नहीं, कई

तेले कर जाता है और इच्छित लाभ न हुआ तो....? शास्त्र कह रहा है- मानव! तेरी क्रिया जन्म-मरण का अंत करने के लिए है। कोई राजा के पास जाकर दो मुट्ठी चना माँगे तो वह उसकी नादानी नहीं तो क्या है? बंधन काटने वाली क्रियाओं से सामान्य फल की आशा करना अज्ञान ही तो है।

एक भाई ने बारह साल तक माला जपी। माला जपने से उसे जल में तैरने की विद्या प्राप्त हो गई। एक महात्मा आए। उन्होंने अपना चमत्कार दिखाया। आदमी जैसे जमीन पर चलता है वैसे पानी पर चलने लगा। महात्मा ने उस आदमी से पूछा-भाई! तुमने यह विद्या प्राप्त करने में कितना समय लगाया ?

वह बोला- महाराज! मैंने बारह साल जप किया है।

महाराज ने कहा- भाई! तूने बारह वर्ष व्यर्थ व्यतीत किए। यह काम तो नाविक दो आने में करा सकता है। आराधना करते किसी को कुछ सिद्धि मिले तो यह संतोष के लिए पर्याप्त नहीं है। आपने आलोचना पाठ में कई उपलब्धियाँ सुनी हैं, पर उनका हार्द कितनों ने समझा है? आप बोलते हैं-

अहो समदृष्टि जीवड़ा, करे कुटुम्ब प्रतिपाल।
अंतर्गत न्यारो रहे, ज्यूँ धाय खिलावे बाल॥

सम्यग्दृष्टि संसार में कैसे रहता है? पानी में नाव रहे तब तक तो ठीक है, पर नाव में पानी रहे तो...? सम्यक् दृष्टि संसार में रहे वहाँ तक ठीक, संसार उसमें नहीं रहना चाहिये। भगवन्त फरमाते थे- असली शहद में मधुमक्खी गिर जाय तो वह बाहर आ जाती है। मक्खी के पंख पर शहद नहीं लगती। शहद के असली या नकली होने की पहचान इससे की जाती है। शहद नकली होगी तो मक्खी बाहर नहीं आ सकती। सम्यक् दृष्टि के लिए यही मापदण्ड है। वह चौदह रत्न नौ निधान वाला हो और पच्चीस हजार देव उसकी सेवा करते हों, पर वह उनसे विलग रहता है। सम्यक् दृष्टि संसार में रहता है, पर संसार उसमें नहीं होता।

सम्यक् दृष्टि आ जाने पर साधक को संसार छोड़ते देर नहीं लगती। वह क्षण-पल में संसार से अलग हो जाता है। सम्यक् दृष्टि नहीं तो फिर रोज कहने और सुनने से लाभ होने वाला नहीं है। आपमें सम्यक् दर्शन है तो रोज सुनते हुए नित्य नयापन लगेगा, अन्यथा कहने वाले कहते भी हैं कि महाराज के यहाँ जाकर क्या करें वहाँ तो वही बात है। ऐसा कहने वाले यह नहीं सोचते कि वीतराग वाणी भले ही

वही है, किन्तु उसको सुनने से लाभ है, इसलिए सुननी जरूरी है। आप भोजन क्यों करते हैं? भोजन में वही दाल-वही रोटी है फिर भी भोजन तो करना ही होता है। आप कपड़े पहनते हैं वही के वही कपड़े हैं, परन्तु कपड़े पहनते आपको यह विचार क्यों नहीं आता है कि ये ही कपड़े हैं। खाते-पीते वही का वही है फिर भी खाना-पीना चलता रहता है तो धर्मस्थान में उस 'क्यों' की बात कैसे उचित है? जब तक वीतराग वाणी जीवन में नहीं उतरती उसे सुनना चाहिये। सामायिक वही है, शास्त्र वही है, कथानक भी वही है, लेकिन जब तक उनका चारित्र में रमण न हो तब तक हमें कहना है और आपको सुनना है। सुनते रहेंगे तो आज नहीं तो कल जीवन में उतरेगा। आप यह क्यों नहीं सोचते कि मुझे सुनते-सुनते इतना समय हो गया फिर भी मैं जहाँ का तहाँ ही क्यों हूँ? इतनी बार वीतराग वाणी का श्रवण किया, मेरा मोह घटा क्यों नहीं? इतनी बार सुनने पर भी मेरा ज्ञान कितना बढ़ा? मेरी कषायें कितनी पतली हुईं? मेरे पाप कितने घटे? पापों से विरति क्यों नहीं हो रही है? ये बातें विचार में आने के बजाय केवल यही कहते रहो कि शास्त्र में क्या पड़ा है तो समझना चाहिये आपका अज्ञान बोल रहा है। दूसरे शब्दों में जिनवाणी पर अभी श्रद्धा नहीं जगी है।

भाई! जब तक भूख रहेगी, भोजन करना पड़ेगा। इसी तरह जब तक सही ज्ञान नहीं होगा तब तक जिनवाणी सुननी पड़ेगी। आप संसार में रहें कोई बात नहीं, आप धाय माता की तरह रहें। फैक्ट्री के मैनेजर के पास सैकड़ों-हजारों लोग काम करते हैं, कई आते हैं, कई जाते हैं, लेकिन मैनेजर किसी पर आसक्ति नहीं रखता। आप संसार में रहते हुए संसार से परे रहें तो माना जा सकता है आपमें सम्यक् श्रद्धा के भाव हैं। सम्यक् श्रद्धान के भाव निरन्तर बढ़ें, यह जरूरी है। कबीर ने कहा है-

पढ़े गुणे, सीखे सुणें, मिटे न संशय शूल।
कह कबीर कैसे कहूँ, यही दुःख का मूल॥

आप पढ़ते भी हैं, सुनते भी हैं, सीखते भी हैं इतना करने पर भी जहाँ थे वहीं हैं तो क्या कहना? जब तक आत्मज्ञान की श्रद्धा नहीं आती दुःख घटने वाला नहीं है। पढ़ने, सुनने, सीखने का लाभ तभी है जब पाप से निवृत्ति हो, गुण प्रकट करने का पुरुषार्थ जगे। जिसे सम्यक् श्रद्धान प्राप्त होगा उसे सुख-शांति-आनन्द प्राप्त होगा।

WHERE IS NON-VIOLENCE AND MORALITY, THERE IS DHARMA.

गंगा में अस्थि-विसर्जन : मुक्ति का हेतु नहीं

उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा.

जिस सिद्धान्त को आप दूसरों को बताते व समझाते हैं अथवा समझाना चाहते हैं, उसके लिए आवश्यकता इस बात की है कि स्वयं आप भी उस सिद्धान्त को भली प्रकार से, सम्यक् प्रकारेण समझ लें। आप महावीर के कर्मसिद्धान्त को मानते हैं, जानते हैं पर व्यवहार के समय आप उसे विस्मृत कर देते हैं। अनेक बार आपमें से अनेक श्रावक-श्राविका कह देते हैं- "भगवान खोटी करी।" "आपाणे हाथ री बात कोनी, भगवान रे हाथ री बात है।" "भगवान ने जो किया, अच्छा किया।" "भगवान ठीक करेला।"

चिन्तन करिए- कर्त्ता और भोक्ता कौन है? सीखते और सिखाते तो यह हैं कि- "अप्पा कत्ता-विकत्ता य" और कहते हैं कि भगवान् ने किया या भगवान् करेगा। भगवान् करता है क्या? आपका वीतरागी सिद्धान्त क्या है? कर्त्ता भी आत्मा है और भोक्ता भी आत्मा है। जैसा कर्म जो जीवात्मा करेगा, उसका वैसा ही फल शुभ या अशुभ उसे भोगना पड़ेगा। आपने कर्म की बात को भगवान से जोड़ दिया। ऐसा क्यों होता है? ऐसा होता है आपके लौकिक संस्कार के कारण। जन्म, विवाह, मृत्यु आदि के समय जितने भी संस्कार आप गृहस्थ करते हैं वे लौकिक संस्कार हैं, जो सनातन धर्म द्वारा दिए गए हैं। आप सनातन धर्म के सिद्धान्तों, संस्कारों से इस तरह घुल-मिल चुके हैं कि आपके सारे लौकिक संस्कार सनातन कथनानुसार ही हो रहे हैं। मरने के पश्चात् भी आप फूल (अस्थि) लेकर गंगा जी जाकर, गंगा के पानी में पधराते हैं और मानते हैं कि आपके इस कर्म या संस्कार से मृतात्मा को शांति मिलेगी, पापों से मुक्ति मिलेगी। क्या यह सत्य है? नहीं! मुक्ति मिलती है कर्मों को नष्ट करने से। पानी में फूल डालने से मुक्ति मिलती तो सभी जलचर मुक्ति के अधिकारी होते, पर ऐसा नहीं है। जिसने जैसे कर्म किए, जिसने जैसा आयुष्य कर्म का बंधन किया, उस जीवात्मा को वही गति मिलेगी, चाहे आप उसके फूल गंगा के पानी में डालो या मत डालो।

बंधुओं चिन्तन करिए- गंगा स्नान से पाप धुलते हों, तीर्थयात्रा से पुण्य मिलते हों तो फिर वीतराग भगवंत प्ररूपित कर्म-सिद्धान्त का क्या होगा?

(२७ फरवरी १९९७ के प्रवचन का अंश)

स्वतन्त्रता का अर्थ

आचार्य श्री देवेन्द्रमुनि जी म.सा.

फ्रीडम को आजादी तो कहा जा सकता है, परन्तु स्वतंत्रता शब्द का सम्पूर्ण भाव उसमें समाहित नहीं होता है। स्वतंत्र शब्द से ही स्वतंत्रता का पूरा सिद्धान्त व्यक्त होता है। फ्रीडम या आजादी का मतलब है- बंधन मुक्ति। मनमौजीपन या अपनी मर्जी अनुसार चलना। 'उन्मुक्तता' शब्द इसका सही भाव प्रकट करता है। स्वतंत्र शब्द में दो शब्द हैं, 'स्व+तंत्र'। 'स्व' का अर्थ है अपना और 'तंत्र' का अर्थ है शासन। यानी जहाँ अपना शासन है, व्यक्ति स्वयं ही स्वयं पर जहाँ शासन करता है, वह है 'स्व+तंत्रता।' इससे यह स्पष्ट होता है कि 'स्वतंत्रता' कोई उन्मुक्तता या स्वच्छन्दता नहीं है, मनमौजीपन नहीं है। स्वतंत्रता का अर्थ है- व्यक्ति अपने अनुशासन में चले। अपने विवेक से, अपनी बुद्धि से, अपने अन्तःकरण की आवाज से अपने आप पर अंकुश या नियंत्रण करके चले। स्वतंत्रता को हम 'आत्मानुशासन' कह सकते हैं।

रेलगाड़ी जब तक पटरी पर चलती है कोई खतरा नहीं, हजारों मील की यात्रा रोज तय करती है। कारें, ट्रक, बसें सड़कों पर नियमानुसार दौड़ती हैं तो कोई खतरा नहीं होता, किन्तु जैसे ही ये वाहन नियम तोड़कर दौड़ने लगते हैं तो दुर्घटना द्वारा कितनों की जीवन लीला समाप्त हो जाती है। कल्पना करो, यदि ये अपनी सीमा तोड़कर आजाद हो जाएँ, बन्धनों से मुक्त होकर मनमानी चाल चलना चाहें तो क्या होगा? संसार में दुर्घटनाएँ होंगी, विनाश लीला मच जाएगी। किंग्सले नामक एक विचारक ने लिखा है- आजादी दो तरह की होती है। एक झूठी आजादी, जहाँ कोई जब चाहे जो चाहे करने को आजाद है। एक सच्ची आजादी- जहाँ वही करने की आजादी हो, जो उसे करना चाहिए। सच्ची आजादी ही वास्तव में स्वतंत्रता है।

आत्मानुशासन क्या है? जब मनुष्य अपने आप पर अपने विवेक का, संयम का अंकुश लगाकर चलता है, तो उसे दूसरों के अनुशासन में चलने की जरूरत नहीं रहती। जैन धर्म में स्वतंत्रता का अर्थ है-आत्मानुशासन। अपने आप पर अपने विवेक का शासन। अच्छा तो यह है कि तुम अपने विवेक से, अपने संयम, तप, तितिक्षा आदि गुणों से स्वयं पर स्वयं का अनुशासन करो। क्योंकि जो स्वयं विवेक से अनुशासित रहता है, उसे दूसरे कभी बंधनों में नहीं बाँधते, न

कोई उसे पीड़ा ही पहुँचाता है। जब मनुष्य स्वयं पर अपना अनुशासन खो देता है तभी दूसरे उस पर अनुशासन करते हैं।

अनुशासन का अर्थ है- किसी के नियंत्रण में चलना। यह दो प्रकार का है- एक आत्मानुशासन, दूसरा परानुशासन। आत्मानुशासन को हम आन्तरिक अनुशासन कह सकते हैं, विवेक बुद्धि का शासन कह सकते हैं। परानुशासन बाह्य अनुशासन है। यह दूसरों के द्वारा थोपा जाता है। जहाँ आन्तरिक अनुशासन है, जहाँ विवेक बुद्धि है, वहाँ दूसरों के डण्डों की, दूसरों के भय की जरूरत नहीं रहती। अनुशासन से इच्छाशक्ति बढ़ती है, व्यवहार कुशलता बढ़ती है, व्यक्ति के चरित्र का ऊर्ध्वमुखी विकास होता है और वह सदैव प्रसन्नचित्त रहता है। अनुशासन से जीवन जीने की शैली आती है। काम करने का तरीका आता है। अनुशासन में उद्योग, व्यापार, प्रशासनतंत्र सुचारु रूप में काम कर सकते हैं, प्रगति कर सकते हैं।

सदियों की गुलामी की जंजीरें तोड़कर हमारा भारत देश स्वतंत्र हुआ है। इस स्वतंत्रता का लाभ तभी मिल सकता है जब स्वतंत्रता में अनुशासन हो, अनुशासन के साथ व्यक्ति के चरित्र का विकास हो।

आज राष्ट्र में चरित्र का ह्रास हो रहा है। इसके अनेक कारण हो सकते हैं। इन कारणों पर चिन्तन करना चाहिए। जहाँ तक मैं समझता हूँ आज मनुष्य की दृष्टि अर्थप्रधान हो गई है। स्वार्थ केन्द्रित मनोवृत्ति ही इस चारित्रिक पतन का मुख्य कारण है। इसलिए आज आजादी की स्वर्ण जयन्ती के दिन मैं देशवासियों से कहना चाहता हूँ कि इस स्वर्ण जयन्ती वर्ष पर स्वर्ण-प्रधान दृष्टि को बदल दीजिए। **स्वर्ण धातु से भी बढ़कर जो असली स्वर्ण है मनुष्य का चरित्र, इस पर ध्यान दीजिए।** इसी चरित्र बल से आपका जीवन महत्त्वपूर्ण बन सकेगा, उस पर चिन्तन करें।

आजादी के कई वर्षों बाद भी शिक्षा जैसा राष्ट्रीय महत्त्व का विषय सबसे अधिक उपेक्षित रहा है, जबकि मानव के चरित्र-निर्माण में यही सबसे महत्त्वपूर्ण घटक होता है। शिक्षा का स्तर, शिक्षा का विषय और शिक्षकों का आदर्श जीवन जैसे अत्यन्त संवेदनशील विषयों पर राष्ट्र के कर्णधार आज जड़-मूक बने बैठे हैं। जबकि दूसरे प्रगतिशील राष्ट्रों में इस विषय पर सबसे अधिक खर्च किया जाता है। सबसे अधिक चिन्तन किया जा रहा है।

आज के जन-जीवन में व्याप्त भ्रष्टाचार के किस्से तो आए दिन सुनते ही

हैं। राष्ट्रीय चरित्र का पतन व हृदय-हीनता की घटनाएँ सुनाकर नैतिक पतन की घिनौनी तस्वीर दिखाकर मैं आपके हृदयों को और अधिक उद्वेलित नहीं करना चाहता। यह तो हम आये दिन देख ही रहे हैं। मनुष्य कितना नीचे गिर गया है। कितना स्वार्थी, लोभी और कर्त्तव्यहीन हो गया है, यह किसी से छिपा नहीं। परन्तु हमें उन श्रेष्ठ व्यक्तियों के आदर्शों पर चिन्तन करना है, उनसे प्रेरणा लेनी है, जिन्होंने अपने जीवन में त्याग-सेवा व अहिंसा का पाठ पढ़ाया और देश की आजादी को सच्चे अर्थ में स्वतंत्रता बनाने का आदर्श प्रस्तुत किया।

अंत में इतना ही कहना चाहूँगा कि हम धर्म, संस्कृति और राष्ट्र के आदर्श चरित्रों का अध्ययन करें, उनसे प्रेरणा लें। अपने व्यक्तिगत चरित्र को राष्ट्रीय चरित्र के साथ जोड़कर उसे सदा उज्ज्वल रखें।

(स्वतन्त्रता की स्वर्ण जयन्ती पर सन् १९९७ में दिये गए संदेश का अंश)

'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' पर आधारित खुली पुस्तक प्रतियोगिता में भाग लेने वाले प्रतियोगी कृपया ध्यान दें

आचार्यप्रवर पूज्य श्री १००८ श्री हस्तीमल जी म.सा. के जीवन-चरित्र 'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' पर आधारित प्रतियोगिता में अच्छा उत्साह देखा जा रहा है। प्रतियोगियों से उत्तरपुस्तिकाएँ भी प्राप्त हो रही हैं। प्रतियोगियों से निवेदन है कि वे उत्तरपुस्तिकाएँ भरते समय एवं भेजते समय निम्नांकित बातों का विशेष ध्यान रखें-

१. उत्तरपुस्तिका के प्रथम पृष्ठ 'प्रतियोगी परिचय पत्र' में अपना पूर्ण विवरण स्पष्ट अक्षरों में दें, जिससे वह पठनीय हो।

२. प्रतियोगी परिचय पत्र के अलावा उत्तरपुस्तिका में अन्य कहीं पर भी अपना नाम या कोई भी विवरण अंकित न करें।

३. उत्तरपुस्तिका भरते समय प्रश्नपुस्तिका में दिए हुए सभी नियमों को पढ़ कर उसके अनुसार उसे भरें।

४. उत्तरपुस्तिका भेजते समय उसके साथ दो पोस्टकार्ड जिन पर आपका (स्वयं का) पता लिखा हुआ हो, अवश्य साथ में भेजें अन्यथा आपको रोल नं. प्रेषित नहीं किये जा सकेंगे।

५. एक लिफाफे में एक ही उत्तरपुस्तिका भेजें। यदि एक से अधिक उत्तरपुस्तिकाएँ एक साथ भेजनी हों तो उनको अलग-अलग लिफाफों में बंद कर पुनः बड़े लिफाफे में पैक करके भेजें। एक साथ दो उत्तरपुस्तिकाएँ यदि एक लिफाफे में प्राप्त हुई तो उन्हें पुरस्कार योग्य नहीं माना जा सकेगा।

-चंचलमल चोरडिया, संयोजक

एक सच्चा मार्ग संयम का

(तर्ज- तेरी प्यारी-प्यारी...)

मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा.

एक सच्चा मार्ग संयम का, जहाँ दुःखों से मुक्ति मिले।।
सुनो मनवा.... ।।टेर।।

समझ रहा जिसको अपना, सत्य नहीं बस है सपना,
सांसारिक सुख तो है धोखा, है केवल मन की भ्रमणा।
अंजाम बुरा है पापों का, क्यों खुद को ही खुद से छले।।१।।
सुनो मनवा...

मन चाहा था भोग अपार, राजा ऋद्धि रमणी परिवार,
दर्शन पाकर एक मुनि के, लगा जिसे खारा संसार।
वो मृगापुत्र संयम पथ पर, सब भोगों को छोड़ चले।।२।।
सुनो मनवा...

रंग-राग थे जहाँ भरपूर, परिणय के दिन नहीं थे दूर,
सुन जिनवाणी जम्बू के, अन्तर में छाया संयम नूर।
वैराग्य से सबको समझाया, तब अन्तर के नेत्र खुले।।३।।
सुनो मनवा...

गौतम से कहते भगवन्, मिला कीमती यह जीवन,
खड़ा किनारे सोच रहा क्या, मेटो भव-भव की भटकन।
जिनवाणी पर जो श्रद्धा करे, वही सच्चे सुखों में पले।।४।।
सुनो मनवा...

-पीपाड़ प्रवचन सभा में उच्चारित एवं
श्री सुमतिचन्द जी मेहता द्वारा संकलित

मैत्री-भावना सबके प्रति

श्री राजमल सिंघी

खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झं न केणई॥

मैं सर्व जीवों से क्षमायाचना करता हूँ एवं सर्व जीव मुझे क्षमा करें। मेरा सर्व के प्रति मैत्री संबंध है, किसी के साथ वैर नहीं है।

वैर शान्ति में बाधक है, कषाय का कारण है, भव-परम्परा बिगाड़ने वाला है। मरुभूति एवं कमठ जैसे सगे भाइयों के बीच में दस भवों तक वैर-परम्परा चली। कमठ दस भवों तक मारने वाला हुआ, किन्तु अन्त में समत्व भावना की साधना करके मरुभूति की आत्मा तेईसवें तीर्थंकर श्री पार्श्वनाथ भगवान् बनकर मोक्ष में गई, परन्तु कमठ तो आज भी संसार में ही भटक रहा है। अग्निशर्मा के जीव ने क्रोध-कषाय में हिंसा करके अत्यन्त संसार बढ़ाया, जबकि मैत्रीभाव से गुणसेन संसार से तिर गया।

क्षमा ही सच्ची सामायिक है एवं सर्व जीवों के प्रति समता तभी आएगी जब जीव मात्र के प्रति मैत्री भाव जगेगा। मैत्री बिना समता नहीं, समता नहीं तो धर्म का अंश भी नहीं। मैत्री और वैर एक साथ नहीं रह सकते। वैर तो भव-परम्परा बढ़ाने वाला है, जबकि मैत्री भावना संसार को सुधारने वाली है। प्रेम, मैत्री का जनक है। प्रेम-स्नेह मैत्री भावना के निर्माता हैं।

मैत्री-भावना का स्वरूप

मैत्री भावना में संसार के एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक के सभी जीव आते हैं। इन सबके प्रति मैत्री-भावना होना आवश्यक है। मैत्री-भावना भाने वाले आराधक के भाव होते हैं कि कोई जीव पाप न करे, कोई जीव दुःखी न हो, जगत् के सभी जीव संसार के बंधन से मुक्त होकर मोक्ष के शाश्वत सुख प्राप्त करें। मैत्री भावना धीरे-धीरे हृदय में व्याप्त हो जाती है और इसका क्षेत्र विशाल हो जाता है। सूक्ष्म से सूक्ष्म जीव सृष्टि में हैं। उन सभी में आत्मा वैसी ही है, जैसी अपने में है। पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु एवं वनस्पति सभी में अपने जैसी ही आत्मा है। उनमें भी ज्ञान, दर्शन, सुख-दुःख इत्यादि सभी होते हैं।

विभिन्नता मात्र इतनी है कि अपने में ये गुण व्यक्त भाव से होते हैं जबकि उनमें अव्यक्त रूप से होते हैं। अतः "मेरे जैसे ही सब जीव हैं" ऐसी उदात्त भावना मन में होनी आवश्यक है, तभी मैत्री भावना प्रकट हो सकेगी। दशवैकालिक सूत्र में कहा गया है कि प्रथम ज्ञान और पीछे दया। जिसमें जीव है उसकी ही दया पाली जाती है। मैत्री भावना कहो, दया भावना कहो, अहिंसा-भावना कहो या क्षमा-भावना कहो, सभी एकता रखती हैं। इस प्रकार 'मैत्री' शब्द अत्यन्त व्यापक है।

मैत्री भावना में सर्व को मित्र स्वरूप में देखने की आवश्यकता है। मित्र भाव वैर वृत्ति का शमन, द्वेष बुद्धि का अभाव सूचित करता है। सर्व को मित्र मानने की भावना उदार-भावना है। यह हृदय की विशालता सूचित करती है। सर्व जीवों पर समान स्नेह भाव रखकर प्रेम रखे वह मित्र है और उसका भाव मैत्री है। यदि मैत्रीभावना के अंकुर फूटे हों, तो हमको समझना चाहिए कि हमने धर्म प्राप्त किया है।

अहिंसा एवं क्षमा का मैत्री से अटूट संबंध

"भावपूर्वक धर्म-बुद्धि से सर्व जीव राशि से मैं क्षमायाचना करता हूँ एवं सर्व जीव मुझे क्षमा करें।" ऐसी प्रकृष्ट भावना को क्षमापना की भावना के रूप में हमने अपनी आराधना में रखा है। अहिंसा-भावना के बिना मैत्री हो ही नहीं सकती एवं मैत्री भावना के बिना क्षमाभाव नहीं हो सकता। सचमुच तो पूर्ण मैत्रीभाव उसमें ही प्रगट होता है जो सचमुच संपूर्ण अहिंसक हो। अहिंसा की जहाँ स्थापना होती है, वहाँ वैर-वृत्ति का त्याग हो जाता है। अहिंसा के समीप वैर-वृत्ति रहती ही नहीं।

तीर्थंकर परमात्मा के मैत्रीभाव का प्रभाव

महावीर स्वामी एवं सभी तीर्थंकर सचमुच पूर्ण मैत्री भाव वाले एवं पूर्ण अहिंसक थे। उनके समवसरण के तीन विभागों में से दूसरे विभाग में परस्पर वैरी पशु-पक्षी भी एक साथ बैठते थे। गाय एवं सिंह साथ बैठते थे, सर्प एवं मोर एक साथ बैठते थे, सर्प एवं नेवला एक साथ बैठते थे, चूहा एवं बिल्ली एक साथ बैठते थे। फिर भी उस समय परस्पर वैरवृत्ति प्रगट नहीं होती

थी। तीर्थंकर भगवान् की पूर्ण अहिंसकता-पूर्ण मैत्री के कारण ही ये जीव वैरवृत्ति भूल जाते थे।

उपसर्ग सहन करने में भी मैत्री-भाव

सिर पर पाल बांधकर- उसमें जलते हुए अंगारे रखने वाले सोमिल (ससुर) को भी गजसुकुमाल मुनि ने मैत्री भाव से देखा। कान में कीले ठोकने वाले एवं तेजोलेश्या फेंकने वाले पर भी अंशमात्र भी द्वेष भाव न रखने वाले महावीर प्रभु की अनुपम मैत्री भावना अनुकरणीय है। भयंकर क्रोध के आवेश में डंक मारने वाले चंडकौशिक सर्प पर भी महावीर प्रभु ने अत्यन्त करुणा बरसाई, उसको शांत किया और तार दिया। यह उन प्रभु की महती अभयदानवृत्ति थी। कमठ ने उपसर्ग उपस्थित किए एवं धरणेन्द्र ने भक्ति की, फिर भी पार्श्व प्रभु ने राग-द्वेष नहीं किया। जैन शासन के इतिहास में ऐसे सैकड़ों उदाहरण हैं, जिनमें वैरवृत्ति न रखते हुए, पूर्ण मैत्री, पूर्ण अहिंसकता, पूर्ण क्षमा-समता रखकर विविध आत्माओं ने अपना कल्याण किया। वैरवृत्ति एवं द्वेष-भाव रखने वाले तो संसार में परिभ्रमण करते हैं, चारों गतियों में भयंकर दुःख प्राप्त करते हैं। जबकि मैत्री भाव, क्षमा, अहिंसा एवं समता भाव वाले संसार-समुद्र में से तिर जाते हैं, चौरासी के चक्कर में से छूटकर मोक्ष में पहुँच जाते हैं।

कल्याण मित्र एवं अकल्याण मित्र

मित्रों के दो भेद बताये गए हैं- कल्याण मित्र एवं अकल्याण मित्र। अकल्याण मित्र शठ होते हैं, मायावी होते हैं। माया मित्रता का नाश करती है। माया, कपट, विश्वासघात एवं धोखे की वृत्ति जहाँ हो, वहाँ मित्रता नहीं टिकती। अतः मित्रता में सरलता होना आवश्यक है। समस्त जीवराशि को मित्र मानने पर, किसी भी जीव के साथ माया का आचरण करने का मन ही नहीं होता। हिंसा, झूठ, चोरी, अब्रह्म-दुराचार, व्यभिचार, मोह-ममत्व के प्रेमी, पाप-प्रिय, कषाय-प्रिय, विषय-वासना प्रिय अकल्याण मित्र कहलाते हैं। अभक्ष्य का भक्षण करने वाले, अपने कल्याण के घातक अपना हित न चाहने वाले भी अकल्याण मित्र ही हैं।

इसके विपरीत जो व्यक्ति अपनी आत्मा का हितचिन्तक होता है, अपने कल्याण की जिसको चिंता हो वही अपना सच्चा मित्र(धर्म मित्र) कहलाता है। साधु-मुनिराज अपने सच्चे धर्म मित्र हैं। वे परमार्थ भाव से अपने को उपदेश देकर पाप मार्ग से दूर करते हैं एवं सच्चा मार्ग दिखाते हैं। अरिहंत तीर्थंकर परमात्मा जैसे परम मित्र तो इस संसार में मिलने कठिन हैं। हिंसा, झूठ, चोरी, अब्रह्म, अपरिग्रह के मार्ग पर जाते हुए, हमको साधु संत रोकते हैं। क्रोध, मान, माया, लोभ के मार्ग पर जाते हुए हमको बचाते हैं। संत तुलसीदासजी ने ठीक ही कहा है-

एक घड़ी आधी घड़ी, आधी से भी आध।
तुलसी संगत साधु की, हरे कोटि अपराध॥

विश्व शांति के लिए मैत्री भावना

वर्तमान विश्व में जहाँ आज मानव-मानव का दुश्मन बन रहा है, मानव मानव का भक्षक बन रहा है, ऐसे ज्वालामुखी के मुख पर बैठी हुई मानव जाति को शांति कहाँ से मिले? हाय! मानव कितना क्रूर एवं घातक हो गया है कि वह अपने ही बंधुओं को मारने के लिए घातक-हिंसक शस्त्रों, अणुबमों का निर्माण कर रहा है, स्वयं ही स्वयं पर कुल्हाड़ी मार रहा है। इसका एक मात्र कारण यह है कि मानव के हृदय में करुणा नहीं है, मैत्री भावना नहीं है। मानव का हृदय मैत्री भावना से रंगा नहीं है। आज विश्व शांति का दूत वही बन सकता है जिसमें मैत्री भावना हो। विश्वयुद्ध, अणुयुद्ध को यदि रोकना है तो एक ही विकल्प है और वह विकल्प है मानव मात्र के हृदय में करुणा, मैत्री भाव का दीपक प्रज्वलित करना।

इस प्रकार मैत्री भावना अनेक गुणों की खान है, अनेक गुणों की जनयित्री है, अनेक गुणों की रक्षक है। इसका क्षेत्र विशाल एवं व्यापक है। ऐसी उत्तमोत्तम मैत्री भावना को सभी जीव भावें, सभी जीवों को वे अपने तुल्य मानें, ऐसी हमारी अंतर की प्रार्थना हो।

-बी, ६१, सेठी कॉलोनी, जयपुर (राज.)

क्रोध क्षोभ का मूल है, क्षमा शांति की खान।
क्रोध छोड़ धारे क्षमा, होय अमित कल्याण॥

नर नारायण बन जायेगा

आचार्यकल्प श्री शुभचन्द्र जी म.सा. के सुशिष्य श्री सुमतिमुनि जी म.सा. द्वारा सम्यक्त्व पराक्रम पर दिये गये प्रवचनों से संकलित पद्य

संवेग

नर नारायण बन जायेगा ||टेर ||

संवेगी श्रद्धालु बनता, श्रद्धा से ही ज्ञानी बनता।
ज्ञानी आनन्द में ही रहता आनन्द में जीना आयेगा ||१ || नर..
संवेगी समकित पाता है, कर्मों का क्षय कर जाता है।
नवबंधन भी रुक जाता है, दर्शन जीवन में आयेगा ||२ || नर..
दर्शन की शुद्धि होती है,तब भाव विशुद्धि होती है।
भव बंधन मुक्ति होती है, मुक्ति का आनंद आयेगा ||३ || नर..

निर्वेद

निर्वेदी निष्कामी बनता और विषय भोग से वह हटता।
आरम्भ शुरु भी नहीं करता, जो आत्म भोग रम जायेगा ||१ || नर..
परिग्रह के भावों से बचता, संसार मार्ग से वह कटता।
सिद्धि के मारग में टिकता, जो वेद विज्ञ बन पायेगा ||२ || नर..
निर्वेदी मालिक बन जाता, संसार में नहीं वह फँस पाता।
कल्याण का जीवन ही ध्याता,जो स्वस्थ जिन्दगी पायेगा ||३ || नर..

धर्मश्रद्धा

सुख की आसक्ति छूटेगी, दुःख से घबराहट टूटेगी।
आत्मा की शक्ति फूटेगी, जो धर्म की श्रद्धा जगायेगा ||१ || नर..
गृही बनकर जो नहीं रीता, अणगार धर्म में है रमता।
तन-मन-वचन को जो जीता, श्रद्धा की ज्योति जगायेगा ||२ || नर..
छेदन-भेदन के दुःख हटते, संयोग वियोग दुःख सब ही मिटते।
बाधा से भी नहीं सुख घटते, जो भेद ज्ञान को पायेगा ||३ || नर..

-संकलनकर्त्री : श्रीमती रतनदेवी चोरडिया, जोधपुर

शोधालेख

चन्द्रगुप्त मौर्य और जैनधर्म

डॉ. एन.के. शर्मा

चन्द्रगुप्त मौर्य का प्राचीन भारतीय इतिहास में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है। वे मौर्यवंश के संस्थापक थे, जिन्होंने नन्दवंश के शासन का अन्त कर ३२१ ई.पू. में पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर अपना आधिपत्य स्थापित किया था और गंगा के पश्चिमी क्षेत्र के विविध जनपदों को जीतकर हिन्दुकुश पर्वत माला तक मगध साम्राज्य का विस्तार किया था। उन्होंने २९७ ई.पू. तक मागध-साम्राज्य के शासन-सूत्र का संचालन किया। २४ वर्ष के अपने शासनकाल में उन्होंने मागध-साम्राज्य को सम्पूर्ण उत्तर भारत में विस्तीर्ण कर दिया।

जहाँ तक चन्द्रगुप्त मौर्य के धर्म का प्रश्न है, वह कुछ विवादग्रस्त है। दीक्षितार के अनुसार चन्द्रगुप्त जैन धर्मावलम्बी न होकर वैदिक धर्म को मानता था।[१] लेकिन जैन साहित्य में उपलब्ध अनुश्रुतियों से ज्ञात होता है कि वह जैन धर्म का अनुयायी था। लेविस राइस के अनुसार इसका समर्थन मैसूर राज्य में स्थित श्रवणबेलगोला नामक स्थान से प्राप्त कुछ मध्यकालीन अभिलेखों से भी होता है। अधिकांश आधुनिक विद्वान् राइस के मत को ही सही मानते हैं।[२] हमारे विचार से भी चन्द्रगुप्त मौर्य जैन धर्मानुयायी था। इसका प्रमाण यह है कि जैन अनुश्रुतियों में चन्द्रगुप्त मौर्य को जैन कहा गया है। दिगम्बर परम्परा में यह बताया गया है कि चन्द्रगुप्त नामक राजा ने श्रुतकेवली भद्रबाहु से जैन धर्म की दीक्षा ग्रहण की थी और दक्षिण में अपने जीवन के अन्तिम वर्ष गुरु की सेवा करते हुए बिताये थे और वहीं पर अपने प्राणों का त्याग किया था। परन्तु श्वेताम्बर जैन इसे स्वीकार नहीं करते, यद्यपि वे भी चन्द्रगुप्त मौर्य का जैन होना प्रतिपादित करते हैं।

जैन अनुश्रुति में राजा चन्द्रगुप्त के जैन धर्म की दीक्षा ग्रहण करने के संबंध में अनेक कथाएँ विद्यमान हैं। **हरिषेणकृत बृहत्कथाकोश** (९३१ ई.) में बताया गया है कि भद्रबाहु पुण्ड्रवर्द्धन देश में रहने वाले एक ब्राह्मण के पुत्र थे।

बाल्यावस्था में उन्होंने एक दिन खेल-खेल में एक के ऊपर एक चौदह गट्टु रख दिये। चतुर्थ श्रुतकेवली गोवर्द्धन ने उन्हें ऐसा करते हुए देख लिया। उसकी प्रतिभा से प्रभावित होकर गोवर्द्धन ने भद्रबाहु को उसके पिता से माँग लिया और उसे पढ़ा-लिखाकर विद्वान् बना दिया। बाद में भद्रबाहु ने अपने गुरु से मुनिव्रत की दीक्षा ग्रहण की और गोवर्द्धन के पश्चात् पाँचवें श्रुतकवेली हुए। वे एक बार घूमते हुए उज्जयिनी गये, जहाँ चन्द्रगुप्त नामक राजा शासन करता था। वहाँ पर एक गृह में उनके प्रवेश करते ही एक शिशु ने कहा, "शीघ्र ही यहाँ से चले जाओ।" भद्रबाहु दिव्य ज्ञानी थे। शिशु के वचन सुनकर वे समझ गये कि यहाँ बारह वर्षों तक वर्षा नहीं होगी। वे भोजन ग्रहण किये बिना ही वहाँ से लौट गये। उन्होंने अपने शिष्यों से कहा कि वे यहाँ से चले जायें और समुद्र के समीप कहीं निवास करें। वे स्वयं उज्जयिनी से नहीं गये, क्योंकि उनकी आयु थोड़ी सी शेष बची थी। भद्रबाहु के आदेशानुसार मुनि संघ दक्षिण की ओर चला गया और पुन्नाह विषय में आश्रय ग्रहण किया। जब चन्द्रगुप्त को बारह वर्ष के दुर्भिक्ष का समाचार ज्ञात हुआ, तो उसने भी भद्रबाहु से मुनिव्रत की दीक्षा ले ली। मुनि होने के पश्चात् चन्द्रगुप्त का नाम विशाखाचार्य रखा गया और उसे संघ का अधिपति नियुक्त कर दिया गया।[3] उसे 'दस पूर्वियों' अर्थात् वे आचार्य जिन्हें बारहवें अंग के दसों पूर्वो का ज्ञान था, में प्रथम गिना जाता है।

उपर्युक्त कथा **रत्ननंदी के भद्रबाहु चरित्र** (लगभग १४५० ई.) में भी मिलती है। इसमें बताया गया है कि अवन्ति देश में चन्द्रगुप्त नामक राजा राज्य करता था। उसकी राजधानी उज्जैन थी। एक बार राजा चन्द्रगुप्त ने भावी अनिष्ट के सूचक सोलह स्वप्न देखे। उसने उनका फल गण के अग्रणी आचार्य भद्रबाहु से पूछा। भद्रबाहु की व्याख्या से संतुष्ट होकर चन्द्रगुप्त ने अपना राज्य अपने पुत्र को सौंप दिया और स्वयं भद्रबाहु से मुनिव्रत की दीक्षा ली। उनका मुनि नाम विशाखाचार्य रखा गया। कुछ दिनों बाद भद्रबाहु श्रेष्ठी जिनदास के घर गये, जहाँ एक बालक अकेला पालने में झूल रहा था। यद्यपि बालक की आयु केवल साठ दिन की थी, पर भद्रबाहु को देखकर उसने 'जाओ जाओ' ऐसा वचन बोलना प्रारम्भ कर दिया। इसे सुनते ही भद्रबाहु समझ गये कि अब शीघ्र ही बारह वर्ष का दुर्भिक्ष पड़ने वाला है, अतः वह ५०० मुनियों के साथ

दक्षिण की ओर चले गये। दक्षिण पहुँच कर कुछ ही समय पश्चात् आचार्य भद्रबाहु को ज्ञात हो गया कि अब उनकी आयु बहुत कम शेष रह गई है। अतः उन्होंने अपने स्थान पर विशाखाचार्य को नियुक्त कर दिया एवं एक गुफा में एकान्तवास करते हुए अनशन द्वारा प्राण त्याग दिये। उनके अन्तिम समय में विशाखाचार्य ने उनकी सेवा की और उनकी मृत्यु के बाद उसी गुफा में निवास करने लगे, जहाँ उनके गुरु ने प्राण त्यागे थे।[४] दिगम्बर सम्प्रदाय के ग्रन्थ **'तिलोयपण्णत्ति'** में भी बताया गया है कि चन्द्रगुप्त ने प्रव्रज्या ग्रहण कर मुनित्व की दीक्षा ली थी और ऐसा करने वाले मुकुटधारी नरेशों में वे अन्तिम थे। उनके बाद ऐसा कोई मुकुटधारी नरेश नहीं हुआ, जिसने प्रव्रज्या ली हो।[५]

इस कथा का इसी रूप में विवरण नेमिदत्त द्वारा लिखित **'आराधना कथाकोष'** में भी मिलता है। जब बारह वर्ष के दुर्भिक्ष की संभावना के कारण भद्रबाहु ने दक्षिण की ओर प्रस्थान किया, तो यतियों (मुनियों) के वियोग से दुःखी होकर उज्जयिनीनाथ चन्द्रगुप्त भी भद्रबाहु से दीक्षा लेकर मुनि बन गया था। इसी प्रकार की कथा **पुण्याश्रवकथा कोष** में भी विद्यमान है।[६] लेकिन इस ग्रन्थ में यह कथा मूलतः समान होते हुए भी एक बात में भिन्न है। इस ग्रन्थ में जिस उज्जयिनीनाथ चन्द्रगुप्त की चर्चा है वह अशोक का पौत्र था, पितामह नहीं। अशोक का पुत्र कुणाल था। कुणाल का पुत्र चन्द्रगुप्त था जिसे अशोक ने अपना उत्तराधिकारी बनाया। इसके अनुसार चाणक्य ने नन्दों का उन्मूलन करके एक निर्धन क्षत्रिय युवक चन्द्रगुप्त को राजा बनाया था। चन्द्रगुप्त ने बहुत काल तक राज्य करने के उपरान्त अपने पुत्र बिन्दुसार को अभिषिक्त करके चाणक्य के साथ जिन-दीक्षा ग्रहण की। कुछ वर्ष उपरान्त बिन्दुसार भी अपने पुत्र को राज्य सौंपकर मुनि बना। एक दिन चन्द्रगुप्त ने सोलह स्वप्न देखे, जिनका फल उसे आचार्य भद्रबाहु ने बताया। इसके आगे की कथा वैसी ही है जैसी भद्रबाहु चरित्र में मिलती है। १९वीं शती में रचित कन्नड़ ग्रन्थ **'राजवलिकथे'** के अनुसार भी जिस चन्द्रगुप्त ने दक्षिण में अनशन करके प्राण त्यागे थे वह अशोक का पौत्र था, पितामह नहीं। लेकिन इस ग्रन्थ में चन्द्रगुप्त को पाटलिपुत्र का राजा बताया गया है, उज्जयिनी का नहीं।

श्वेताम्बर जैनों के प्रसिद्ध ग्रन्थ परिशिष्ट पर्व में भी चन्द्रगुप्त मौर्य को

जैन धर्म का अनुयायी लिखा है, लेकिन उसके अनुसार चन्द्रगुप्त ने आचार्य भद्रबाहु से जैनधर्म की दीक्षा नहीं ली थी। परिशिष्ट पर्व की कथा दिगम्बर जैनों के कथानकों से भिन्न है। इसके अनुसार पहले चन्द्रगुप्त जैन नहीं था, उस पर मिथ्यादृष्टि वाले पाखण्डी मतों का प्रभाव था। यह चन्द्रगुप्त को पसन्द नहीं था, इसलिये उसने प्रयत्न किया कि उन पर से इन मिथ्या सम्प्रदायों का प्रभाव दूर हो जाय। चाणक्य ने उसे समझाया कि इन सम्प्रदायों के आचार्य असंयत, पापमय जीवन बिताने वाले और स्त्रियों के प्रति लम्पट हैं। वे तो इस योग्य भी नहीं हैं कि उनसे बात तक की जाये। मौर्य चन्द्रगुप्त ने यह सुनकर कहा कि मुझे गुरु के वचनों पर पूर्ण विश्वास तो है, पर ये पाखण्डी संयमी नहीं हैं, इसका मैं प्रमाण चाहूँगा। इस पर चाणक्य ने नगर में घोषणा करवाई कि राजा सभी पाखण्डियों (सम्प्रदायों के अनुयायियों) से धर्म-श्रवण करना चाहता है। पाखण्डियों ने चाणक्य के निमंत्रण को स्वीकार कर लिया और उन्हें राजप्रासाद के एक ऐसे स्थान पर ले जाया गया, जो अन्तःपुर के अत्यन्त समीप था। अन्तःपुर के सामने की भूमि पर ऐसा चूर्ण डलवा दिया गया, जो कि अत्यन्त सूक्ष्म होने के कारण दिखायी नहीं देता था। राजा के आने में अभी देर थी, अतः ये असंयत, स्त्रैण और स्त्री लोलुप पाखण्डी जन अन्तःपुर की खिड़कियों के पास जा खड़े हुये और उनके छिद्रों से राजपत्नियों को देखने लगे। ज्यों ही चन्द्रगुप्त वहाँ आया, वे तुरन्त अपने स्थानों पर बैठ गये और चन्द्रगुप्त को धर्म का उपदेश दिया। उनके चले जाने पर चाणक्य ने चन्द्रगुप्त को वे पदचिन्ह दिखाये, जो कि अन्तःपुर की खिड़कियों तक सूक्ष्म चूर्ण पर बन गये थे। अगले दिन जैन मुनियों को धर्म उपदेश के लिए बुलाया गया। पहले दिन के समान फिर से सूक्ष्म चूर्ण बिछाया गया, पर जैन मुनि राजप्रासाद में प्रविष्ट होकर यथास्थान बैठ गये और राजा के आगमन की प्रतीक्षा करते रहे। राजा को उपदेश देकर जब वे वापिस लौटे, तो सूक्ष्म चूर्ण पर कोई भी पदचिन्ह नहीं पाया गया। इससे चन्द्रगुप्त को विश्वास हो गया कि जैन मुनि अन्य पाखण्डियों से भिन्न हैं और उसने अन्य पाखण्डों के प्रति आस्था का परित्याग कर जैनधर्म को स्वीकार कर लिया।[७] परिशिष्ट पर्व में न तो भद्रबाहु का उल्लेख है और न जैन मुनि बनने के पश्चात् चन्द्रगुप्त के दक्षिण में प्रस्थान करने का। लेकिन वहाँ यह अवश्य लिखा है कि चन्द्रगुप्त के समय में बारह वर्ष का दुर्भिक्ष पड़ा था

और चन्द्रगुप्त ने समाधि लेकर अपने जीवन का अन्त कर दिया।[८] चन्द्रगुप्त के संबंध में जैन ग्रन्थों में जो कथायें पायी जाती हैं, वे एक-दूसरे के समान नहीं है। इस विषय में दिगम्बर और श्वेताम्बर अनुश्रुतियों में भेद है।

आभिलेखिक साक्ष्य

दिगम्बर अनुश्रुति के ग्रन्थों में चन्द्रगुप्त के अन्तिम समय के संबंध में जो विवरण दिया गया है, उसकी पुष्टि श्रवणबेलगोला (मैसूर राज्य) से उपलब्ध उत्कीर्ण-लेखों द्वारा भी होती है। ये अभिलेख संस्कृत और कन्नड़ दोनों भाषाओं में हैं, जिनका समय छठी शती ई. से लेकर १५वीं शती ई. तक है। राइस के अनुसार "इन स्थानों पर जैनों की आबादी अन्तिम श्रुतकेवली भद्रबाहु द्वारा हुई। भद्रबाहु ने इसी स्थान पर प्राण त्याग किया था। अशोक के पितामह मौर्य राजा चन्द्रगुप्त ने जिसे ग्रीक इतिहासकारों ने सैण्ड्रोकोट्टस लिखा है, अन्तिम समय में इस (भद्रबाहु) की सेवा की थी।[९] श्रवणबेलगोला की स्थानीय अनुश्रुति के अनुसार चन्द्रगुप्त और भद्रबाहु का इस स्थान के साथ घनिष्ठ संबंध था। यहाँ के एक पर्वत का नाम 'चन्द्रगिरि' है, जिसके संबंध में यह कहा जाता है कि उसका यह नाम चन्द्रगुप्त नाम के एक महात्मा के नाम पर पड़ा है। इसी पर्वत पर एक गुफा है, जिसे भद्रबाहु स्वामी की गुफा कहा जाता है। वहाँ एक मठ भी है, जिसे 'चन्द्रगुप्त बस्ती' कहते हैं। इसके अतिरिक्त इस बस्ती अर्थात् मन्दिर के अग्रभाग पर जो जाली के रूप में बना हुआ है, भद्रबाहु-चन्द्रगुप्त कथा से संबंधित ९० दृश्य पत्थर पर उत्कीर्ण हैं।[१०]"

६०० ई. के एक अभिलेख की कथा इस प्रकार है, "भद्रबाहु स्वामी आठों प्रकार के शकुनों की व्याख्या करने में समर्थ और त्रिकालदर्शी थे। एक बार उन्होंने एक शकुन से यह निष्कर्ष निकाला कि उज्जयिनी में १२ वर्ष का दुर्भिक्ष पड़ने वाला है। इस पर उनके आदेश से मुनिसंघ दक्षिण की ओर चला गया और पृथ्वी के धनधान्य से परिपूर्ण एक सुन्दर स्थान पर निवास करने लगा। तब प्रभाचन्द्र नामक एक आचार्य ने यह देखकर कि उनके अपने जीवन के थोड़े ही दिन शेष रह गये हैं कटवप्र नामक स्थान पर निवास करने का निश्चय किया और समस्त संघ को विदा करने के बाद केवल एक शिष्य के साथ वहाँ रहते हुए समाधि लेकर प्राणों का त्याग किया।" लेकिन इस

अभिलेख में न तो चन्द्रगुप्त का उल्लेख है, न भद्रबाहु द्वारा दक्षिण यात्रा का और न प्रभाचन्द्र द्वारा भद्रबाहु के पास रहकर उनकी सेवा करने का।[११]

चन्द्रगिरि पर विद्यमान एक शिलालेख से ज्ञात होता है कि भद्रबाहु ने इसी स्थान पर प्राण त्याग किये थे। वहाँ लिखा है कि भद्रबाहु श्रुतकेवली मुनीश्वरों में अन्तिम था, वह सम्पूर्ण ज्ञान के अभिप्राय का प्रतिपादन करने में समर्थ होने के कारण विद्वानों में मूर्धन्य एवं उनका विनेता था और समग्र शीलसम्पन्न चन्द्रगुप्त उनका शिष्य था। इसी पर्वत पर उपलब्ध एक अन्य शिलालेख से भी इसी बात को अन्य ढंग से प्रगट किया गया है। कुछ अन्य शिलालेखों में भी चन्द्रगुप्त को अन्तिम श्रुतकेवली भद्रबाहु का शिष्य बताया गया है और कहा गया है कि चन्द्रगुप्त और 'मुनिगण' ने इतना पुण्य अर्जित कर लिया था कि वनदेवता भी उनकी पूजा करने लगे थे।[१२]

जैन साहित्य के अनुसार चन्द्रगुप्त जैनधर्म का अनुयायी था, यह निर्विवाद है। परिशिष्ट पर्व में तो चाणक्य को भी जैन कहा गया है। दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों ही जैन अनुश्रुतियों में मौर्यवंश के प्रवर्तक चन्द्रगुप्त को जैन माना गया है, लेकिन मुनिव्रत ग्रहण कर चुकने पर उसके सुदूर दक्षिण में जा बसने और वहीं पर प्राणत्याग करने की बात श्वेताम्बर जैनों को मान्य नहीं है।

संदर्भ

१. प्रोसीडिंग्स ऑव दि इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस, ३ (१९३९) पृ. ५२०
२. मुकर्जी, आर.के., चन्द्रगुप्त मौर्य एवं उसका काल, पृ. ६४-६६
३. बृहत्कथाकोश, कथा १३१, श्लोक ३५-४०
४. विद्यालंकार, सत्यकेतु, मौर्य साम्राज्य का इतिहास, पृ. ४४६
५. तिलोयपण्णति, कथा १४८
६. पुण्याश्रवकथाकोष, नन्दिमित्र की कथा, नाथूराम प्रेमी द्वारा अनूदित।
७. परिशिष्ट पर्व, अष्टम सर्ग
८. वही, ८/४४४
९. राइस लेविस, मैसूर एण्ड कुर्ग इन्स्क्रिपशन्स।
१०. मुकर्जी, पूर्वोक्त, पृ. ६६
११. विद्यालंकार, सत्यकेतु, पूर्वोक्त पृ. ४५०
१२. वही।

वक्तृत्व-कला के सूत्र

डॉ. दिलीप धींग

समूह में बोलना मुश्किल नहीं तो आसान भी नहीं है। कितने ही व्यक्ति चाहते हुए भी किसी सभा या समूह में बोल नहीं पाते हैं या जैसा/जितना बोलना चाहते हैं, वैसा/उतना नहीं बोल पाते हैं। जानना अलग बात है और जानी हुई बात को श्रेष्ठ ढंग से अभिव्यक्त करना अलग बात है। प्रवचन, व्याख्यान या भाषण देना एक कला है। कला साधना, अभ्यास तथा सातत्य माँगती है। अभ्यास से किसी भी कार्य या कला में निपुणता बढ़ती है और निखार आता है। वक्तृत्व-कला वचन-शक्ति पर आधारित है। तीर्थंकर महावीर द्वारा प्ररूपित त्रियोग में एक वचन योग है। उन्होंने दस बलप्राण बताए, उनमें एक वचन बलप्राण है। श्रेष्ठ वक्ता बनने के लिए यहाँ कुछ अनुभूत व उपयोगी सूत्र दिये जा रहे हैं।

अच्छे वक्ताओं को ध्यानपूर्वक सुनना

जो व्यक्ति अपनी वक्तृत्व-कला का विकास करना चाहे, उसे अच्छे वक्ताओं और प्रवचनकारों को ध्यानपूर्वक आद्योपान्त सुनना चाहिये। वक्तव्य की शुरुआत, विषयवस्तु का प्रतिपादन, शब्दों/वाक्यों का उतार-चढ़ाव, हाव-भाव, समाप्ति आदि बातें ध्यान देने योग्य व ग्रहण करने योग्य होती हैं। जो व्यक्ति दूसरों को गंभीरता तथा दिलचस्पी से सुन सकता है, तय है कि दूसरे भी उसकी बात सुनेंगे।

मंगलाचरण एवं संबोधन

किसी भी प्रवचन या भाषण की शुरुआत सम्बोधन से होती है। प्रवचन या व्याख्यान के आरम्भ में तथा धार्मिक सभा में बोलने से पूर्व मंगलाचरण भी किया जाता है। मंगलाचरण संक्षिप्त, सारगर्भित और ऊर्जा पैदा करने वाला होना चाहिये। मंत्रमय मंगलाचरण से व्याख्यान का अनुकूल प्रभाव होता है। सम्बोधन ऐसा हो कि वक्ता हर वर्ग के श्रोता से जुड़ जाये। शिकागो की विश्व धर्म संसद में विवेकानन्द ने अपने सम्बोधन से ही प्रभावित करना शुरु कर दिया था। सम्बोधन आत्मीय व सम्मानजनक होना चाहिये।

विषय की समुचित जानकारी

वक्ता को जिस विषय पर बोलना हो, उस विषय की पर्याप्त जानकारी

उसे होनी चाहिये। विषय को क्रमशः स्पष्ट करने के लिए विषय के संकेत-बिन्दु लिखित में बनाये जा सकते हैं। ऐसा करने से विषयान्तार होने की संभावना नहीं रहती है तथा बोलना लक्ष्यपूर्ण हो जाता है। समुचित तैयारी के अभाव में वक्ता जो बोलना चाहता है, वह तो भूल जाता है और नहीं बोलने योग्य बोलकर बैठ जाता है।

वचन-शक्ति का विकास

जैसाकि बताया गया वचन एक योग और बलप्राण है। प्रश्न है इस शक्ति को ऊर्जावान और प्रभावशाली कैसे बनाया जाय। इसके लिए पहली आवश्यकता है- सदाचार। आचार-शून्य व्यक्ति के न विचार प्रभावी होते हैं, न वचन। वचन जब आचरण/अनुभव की आँच में तप कर बाहर आते हैं, तो प्रवचन बन जाते हैं। इसीलिए वचन को व्यक्ति के व्यक्तित्व का दर्पण भी कहा जाता है। दूसरों को देने से पूर्व स्वयं को उपदेश देना आवश्यक है। वचन-शक्ति को विकसित करने के लिए दूसरी आवश्यकता है- मौन। भगवान् महावीर ने साढ़े बारह वर्षों तक मौन साधना की, तत्पश्चात् कैवल्य-प्राप्ति के उपरान्त देशना प्रदान की। अधिक व अनावश्यक बोलने वाला व्यक्ति वक्ता बनना तो दूर, साधारण बातचीत में भी अपनी बात प्रभावी तरीके से नहीं कह पाता है। संतों और महापुरुषों की साधारण बातें भी असाधारण असर करती हैं, जिसका कारण उनकी वचन शक्ति है।

वचन-शक्ति के विकास के लिए साधना भी की जा सकती है। जैसे णमोकार महामंत्र के तीसरे पद 'णमो आयरियाणं' का पीले रंग की कल्पना के साथ कण्ठ पर ध्यान करना। तीर्थंकरों की 'दिव्य-ध्वनि' अतिशय के चिन्तन-मनन व ध्यान से भी लाभ होता है। दिव्य-ध्वनि अतिशय के जप-ध्यान के लिए भक्तामर स्तोत्र के पैंतीसवें और कल्याण मंदिर स्तोत्र के इक्कीसवें श्लोक को आधार बनाया जा सकता है। मुख्य बात यह है कि भाषा समिति और वचन गुप्ति के अनुपालन से वचन-योग शक्तिमान बनता है।

शब्द सामर्थ्य

वक्ता को अपना शब्द-ज्ञान अधिक से अधिक बढ़ाना चाहिये। साथ ही भाषा पर अच्छा अधिकार भी आवश्यक है। पर्याप्त भाषा ज्ञान और शब्द-सामर्थ्य के अभाव में वक्ता अपने भावों को न तो उपयुक्त शब्द दे पाता है

और न ही बेहतरीन ढंग से उन्हें व्यक्त कर पाता है। हिन्दी पर अच्छा अधिकार नहीं होने की वजह से वर्तमान में कई हिन्दी-वक्ता अपने वक्तव्य में अनावश्यक अंग्रेजी-शब्दों का प्रयोग करते हैं। इस संबंध में साधारण बातचीत में भी हमारी स्थिति निराशाजनक है। इसलिए हमें शब्द-सामर्थ्य बढ़ाना चाहिये।

अध्ययन

जीवन में अध्ययनशीलता का होना बहुत आवश्यक है। स्वाध्याय व अध्ययन से हमारा अनुभव, ज्ञान तथा जानकारी का दायरा बढ़ता/विकसित होता है। अध्ययनशील व्यक्ति को कहीं भी किसी भी विषय पर बोलने के लिए खड़ा कर दिया जाय तो वह बाजी मार लेता है। अध्ययन-अनुभव के बिना कुछ भी प्रभावी व तर्कसंगत ढंग से कहना कठिन होता है।

सतत अभ्यास

व्यक्ति को जब, जहाँ सहज रूप में बोलने का अवसर मिले, आत्मविश्वास के साथ उसे अपनी बात कहनी चाहिये। छोटे-छोटे मंचों पर तथा थोड़े श्रोता-समूह में बोलने वाला बड़ी सभाओं में भी बोलने लगेगा। अभ्यास में पाँव काँपने की स्थिति तथा हिचकिचाहट समाप्त हो जाती है।

उद्धरण/उदाहरण

वक्तृत्व-शैली को बहुआयामी और समृद्ध बनाने के लिए महापुरुषों की सूक्तियों, शास्त्र के श्लोकों तथा काव्य-पंक्तियों का प्रयोग सहायक सिद्ध होता है। उद्धरण के साथ संदर्भ देना, कवि या महापुरुष का नामोल्लेख करना अच्छा माना जाता है। इससे वक्ता की जानकारी, निष्पक्षता, निरहंकारिता और ईमानदारी का परिचय मिलता है। किसी बात या बिन्दु को स्पष्ट, पुष्ट या सिद्ध करने के लिए किसी उदाहरण, रूपक, दृष्टान्त, घटना अथवा प्रसंग का उल्लेख करने से भाषण की प्रभावोत्पादकता बढ़ती है। इसका यह अर्थ नहीं कि सिर्फ किस्से-कहानियों व चुटकुलों में ही व्याख्यान समाप्त कर दिया जाय। उद्धरणों और उदाहरणों का प्रसंगवश और विवेकसम्मत प्रयोग ही उचित है।

समय का विवेक

समय को जानने-समझने वाला समयज्ञ होता है। वक्ता को समयज्ञ होना चाहिये। आज हर व्यक्ति के पास तथा हर सभा या कार्यक्रम में प्रायः समय का

अभाव होता है। श्रोता ऊब जाते हैं और वक्ता बोलते चले जाते हैं। एक दक्ष वक्ता वही है जो जहाँ जितना बोलना है, उससे अधिक व फिजूल न बोले। अपनी बात को कम-से-कम शब्दों में कहने का अभ्यास वक्ता को अवश्य करना चाहिये।

प्रभावी समापन

जिस प्रकार भाषण आरम्भ करना कला है, उसी प्रकार समाप्त करना भी। निर्धारित समय में निर्धारित बिन्दु पर भाषण का समापन ठीक लगता है। समाप्ति पर भाषण टूटता हुआ नहीं लगना चाहिये। जिस लयबद्धता से भाषण शुरु हुआ, चला; उसी लयबद्धता से उसकी समाप्ति से श्रोताओं को लगेगा जैसे उन्हें कुछ मिल गया। कितने ही वक्ता अपनी बात इतनी पसार लेते हैं कि उसे समय पर समेटना मुश्किल हो जाता है और सारा मजा किरकिरा हो जाता है। समाप्ति पर 'जय भारत' 'जय महावीर' 'धन्यवाद' या कुछ और जो भी अवसर के अनुकूल हो बोला जा सकता है।

इस प्रकार व्यक्तित्व-विकास के लिए वक्तृत्व कला को विकसित करना चाहिये। वचनों के बल पर बड़ी-बड़ी क्रान्तियाँ और तब्दीलियाँ हुई हैं। परिवर्तन उन्हीं वचनों के बल पर संभव होता है, जो तपस्या की अग्नि में तपे हों तथा हृदय की गहराई से प्रकट हुए हों।

-ट्रेड हाउस, दूसरी मंजिल, २६, अश्विनी मार्ग, उदयपुर (राज.)

नमस्कार मर्मस्पर्शी

पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकर विजयजी

आत्मज्ञान प्राप्त करने का मुख्य साधन विचार है। यह विचार दो रूप में प्रवर्तित होता है। एक वैराग्य के रूप में व दूसरा मैत्री के रूप में अर्थात् जीवमात्र के प्रति मैत्रीरूप तथा जड़मात्र के प्रति वैराग्य रूप। नमस्कार दोनों प्रकार के विचारों को प्रेरित करता है। परमार्थभूत आत्मा सत्पुरुषों में होती है। परमेष्ठी नमस्कार में सत्पुरुषों की परमार्थभूत आत्मा को नमस्कार है, इसीलिए परमेष्ठी नमस्कार समस्त शास्त्रों का मर्मरूप है। शास्त्र तो मार्ग बताते हैं। उसका मर्म सत्पुरुषों के अन्तर में है तथा परमेष्ठी नमस्कार उस मर्म को छूता है।

प्रेषक : नवरतनमल डोसी, जोधपुर (राज.)

वर्तमान शिक्षा-प्रणाली में नैतिक शिक्षा की आवश्यकता

डॉ. रजनीश शुक्ला

वर्तमान शिक्षा का जो स्वरूप हमें दिखायी देता है वह पूर्णतः व्यावसायिक है। व्यावसायिक शिक्षा किसी बालक को जीविका के लिये तो तैयार कर सकती है, किन्तु वह बालक के सर्वांगीण विकास में सहायक नहीं हो सकती। बालक के व्यक्तित्व को निखारने के जो चार आयाम विद्वानों ने निर्धारित किये हैं, वे हैं- शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और भावनात्मक विकास। इनमें से केवल वर्तमान में शारीरिक और बौद्धिक विकास पर ही ध्यान दिया जा रहा है, शेष पर कोई चर्चा ही नहीं की जाती। इससे शिक्षा-व्यवस्था दूषित होती जा रही है। अतएव आज आवश्यकता है कि उपर्युक्त सभी आयामों के अन्तर्गत बालक का सर्वांगीण विकास हो। शिक्षा का उद्देश्य है-

असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय। मृत्योर्माऽमृतं गमय।

असत् से सत्य की ओर प्रयाण करना, अज्ञान रूपी अंधकार से ज्ञान रूपी आध्यात्मिक प्रकाश की ओर गमन करना, मृत्यु तथा विनाशशीलता से अविनश्वर मोक्ष रूपी अमृत को प्राप्त करना शिक्षा का उद्देश्य है। अर्थात् शिक्षा से जीव "सत्यं शिवं सुन्दरम्' को अपनाता हुआ सच्चिदानंद बन जाता है।

कवि भर्तृहरि का कथन है कि विद्या ही मनुष्य का सौन्दर्य और गुप्त धन है। विद्या ही भोग, यश और सुख को देने वाली है। विद्या ही गुरुओं का भी गुरु है। परदेश में विद्या ही बन्धु है। विद्या परा देवता है। विद्या ही राजाओं में पूजी जाती है, अतः विद्याहीन नर पशु है।

इसी सन्दर्भ में भगवान् महावीर की शिक्षाओं में कुन्दकुन्दाचार्य ने कहा है कि जिससे तत्त्व का बोध होता है, जिससे मन का निरोध होता है, जिससे आत्मा शुद्ध होती है, जिनशासन में उसका नाम ज्ञान है। जिसके द्वारा जीव राग से विरक्त होता है, जिसके द्वारा मोक्ष में रमता है, जिसके द्वारा मैत्री को भावित करता है महावीर के शासन में वह ज्ञान कहा गया है।

धम्मपद में कहा गया है कि पापों को न करना पुण्यों का संचय करना, अपने चित्त को परिशुद्ध करना, ये बुद्ध की शिक्षाएँ हैं। निन्दा न करना, घात न

करना, प्रतिमोक्ष में संयम रखना; भोजन में मात्रा जानना, एकान्तवास पूर्वक चित्त को योग में लगाना- ये बुद्ध की शिक्षाएँ है।

गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं कि जिनके अज्ञान का आत्मज्ञान द्वारा नाश हो गया है,उनका वह सूर्य के समान,प्रकाशमय ज्ञान परमतत्त्व का दर्शन कराता है। ज्ञान द्वारा जिनके पाप धुल गए हैं, वे ईश्वर का ध्यान धरने वाले, तन्मय हुए,उसमें स्थिर रहने वाले, उसी को सर्वस्व मानने वाले लोग मोक्ष पाते हैं।

उपर्युक्त समस्त वर्णन से यह सिद्ध होता है कि केवल अक्षर का ज्ञान कर लेना, साक्षर बन जाना, हस्ताक्षर कर लेना, पुस्तकों का अध्ययन कर लेना या धन कमाने के लिए नौकरी करना ,व्यवसाय करना शिक्षा का सम्पूर्ण उद्देश्य नहीं है। शिक्षा का संक्षिप्ततः सम्पूर्ण उद्देश्य व्यक्ति एवं समाज का सर्वांगीण एवं सार्वभौम विकास है।

साक्षरता को ही शिक्षा मान लेना, कक्षा उन्नति को ही शिक्षा का विकास मानना, उपाधियों को योग्यता एवं सक्षमता मान लेना ,परीक्षा उत्तीर्ण को ही शिक्षा का परिणाम मानना,आपाधापी जीवन को ही पुरुषार्थमय जीवन मानना, नौकरी प्राप्त करने को शिक्षा का लक्ष्य मानना आदि शिक्षा का सम्यक् एवं पूर्ण स्वरूप नहीं है।

आधुनिक शिक्षा में जो कमी है वह है आध्यात्मिक एवं नैतिक शिक्षा की कमी। भौतिक उन्नति को अधिक महत्त्व देना मानो चारित्रिक एवं आध्यात्मिक उन्नति की अवहेलना करना है। प्राचीन काल में विद्यार्थी जहाँ ब्रह्मचर्य एवं संयम में जीवन-यापन करते थे वहाँ अब इन जीवन-मूल्यों पर कोई ध्यान नहीं हैं । शिक्षक जो पहले भगवान् के समकक्ष थे आज वही शिक्षक शोषणकारी, अल्पज्ञ, असम्माननीय उपमाओं से नवाजे जा रहें हैं । इसलिये वर्तमान में समाज के विभिन्न वर्गों से आवाज आ रही है कि शिक्षा में परिवर्तन होना चाहिये । लेकिन किस प्रकार का परिवर्तन हो यह समाज के प्रबुद्धवर्ग, वरिष्ठ शिक्षक साधु, महात्मा आदि लोग मिलकर ही इसकी दिशा और दशा को तय कर सकते हैं ।

बीसवीं शताब्दी के महापुरुषों में महात्मा गाँधी, विनोबा भावे, मॉन्टेसरी, रवीन्द्रनाथ टैगोर, डॉ.राधाकृष्णन् आदि ने भी आधुनिक शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन का आह्वान किया था । केवल उन्होने आह्वान ही नहीं किया बल्कि अपने-अपने क्षेत्र में इसको कार्यान्वित भी किया।

वर्तमान में जो शिक्षा व्यवस्था है उसमें व्यक्ति के मन को प्रशिक्षित करने का कोई आधार नहीं है। मन को प्रशिक्षित किये बिना किसी के स्वभाव में परिवर्तन नहीं लाया जा सकता हैं। भगवान् महावीर कहते हैं कि पहले मन को शिक्षित करो जितनी भी विकृतियाँ आती हैं वे सब मन की चंचलता से उत्पन्न होती हैं इसलिए पहले मन पर ध्यान दिया जाय, जिससे मनुष्य अपनी भीतरी शक्तियों से परिचित हो सके।

सर्वधर्म समभाव के लिए मात्र विभिन्न धर्मों का अध्ययन करना ही पर्याप्त नहीं है। जब तक धर्म को आचरण में न उतारा जाय तब तक धर्म की शिक्षा का कोई मूल्य नहीं है। इसके लिए धर्म के तत्त्वों को मूल रूप से जानकर पाठ्यक्रम में व्यवस्थित करना आवश्यक है। प्रो. ए.एन. ह्वाइटहेड लिखते हैं कि ''शिक्षा का सार तत्त्व यह है कि वह धार्मिक होती है। शिक्षा को धर्म से अलग नहीं किया जा सकता।'' राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने शिक्षा के क्षेत्र में नैतिकता को अनिवार्य रूप से स्वीकार करते हुए कहा है कि मेरे लिए नैतिकता के आधारभूत सिद्धान्त सभी धर्मों में समान हैं।

नैतिक मूल्यों का सम्बन्ध न तो अलगाव से है और न कट्टरवादिता से। नैतिक मूल्यों का सम्बन्ध समत्व से है। समत्व से सभी प्रकार की विषमताओं, संघर्षों एवं वैमनस्यों का शमन और सुख-शान्ति का मार्ग प्रशस्त होता है। नैतिक मूल्य मानव के व्यक्तित्व को उत्कर्षता प्रदान करते हैं। वर्तमान में जो शिक्षा पद्धति है उसमें सब कुछ है, परन्तु पर पदार्थों की ही चर्चा की जाती है, स्व अर्थात् आत्मा से जोड़ने की शिक्षा नहीं दी जाती है, इसलिए इस कड़ी को नैतिक शिक्षा के माध्यम से जोड़ना आवश्यक है। भगवान् महावीर की यह शिक्षा नैतिक शिक्षा ही है जो मनुष्य को सिखाती है कि किसी भी प्राणी के प्राणों का हनन न करें। उन पर अनुचित शासन न करें। उनको अपने अधीन न बनाएँ, उनको परिताप न दें और किसी प्रकार उपद्रव न करें। हम कह सकते हैं कि मानव जीवन के सर्वतोमुखी विकास के लिए जीवन में सत्यता, सरलता, निष्कपटता, मानवता, विनम्रता, अप्रगल्भता आदि मानवीय गुणों को ग्रहण करना और असत्य, क्रोध, लोभ, मोह, द्वेष, हिंसा, स्वार्थ, आदि आसुरी प्रवृत्तियों को त्यागना ही एकमात्र श्रेष्ठ व सरल उपाय है। ये तभी सफल हो सकते हैं, जब हम बच्चों को नैतिक शिक्षा के ज्ञान से परिचित कराएँ।

भारत के महान् क्रान्तिकारी नेता सुभाषचन्द्र बोस श्रेष्ठ राष्ट्र के लिये

उत्कृष्ट माता की आवश्यकता को सर्वोपरि मानते थे। राष्ट्र के लिये उनका कथन था- A good mother is better then hundred teachers अर्थात् एक योग्य माता सौ शिक्षकों से भी उत्कृष्ट है, और भी कहते थे You give me a hundred mothers, I will give you a good nation अर्थात् आप मुझे सौ उत्तम मातायें दें, मैं एक उत्तम राष्ट्र दूँगा। नारी समाज को सुसंस्कृत करने से मानव समाज भी पल्लवित, पुष्पित, सुसंस्कृत होता है। इसीलिये प्राचीन नीतिकारों ने कहा है -

स्त्रियःश्रियश्च गेहेषु न विशेषोऽस्ति कश्चन।
जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी॥ -मनुस्मृति १९/२६

बालक के सर्वांगीण और सार्वभौमिक विकास में समाज तथा परिवार का योगदान जरूरी होता है, उन्हीं में से कतिपय बिन्दुओं की चर्चा यहाँ की गयी है। यथा-

१.शारीरिक विकास- शरीर के माध्यम से हम स्व का विकास एवं समाज की सेवा करते हैं। इसलिये शारीरिक विकास करना भी शिक्षा का एक उद्देश्य है।

२.मानसिक विकास- "मन एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः" अर्थात् मन ही मनुष्य के बंध एवं मोक्ष का कारण है। हमारी मानसिक कमजोरियाँ यथा अशिक्षा, कुशिक्षा, अंधश्रद्धा, अंध-परम्परायें स्वयं के एवं राष्ट्र के पतन के लिए कारण हैं। इससे विपरीत सुशिक्षा, सुसंस्कार, मानसिक दृढ़ता, निर्णय लेने की क्षमता, मौलिक स्वतंत्र विचारधारा, स्व एवं समाज की उन्नति के लिए आवश्यक है।

३.चरित्र निर्माण- "चारित्तं खलु धम्मो" अर्थात् चरित्र ही श्रेष्ठ धर्म है "ज्ञानं भारः क्रियां विना" अर्थात् सदाचरण के बिना ज्ञान भार स्वरूप है, क्योंकि - 'साक्षरा विपरीताश्चेत् राक्षसा एव केवलम्' अर्थात् विपरीत आचरण करने वाले साक्षर व्यक्ति राक्षस हैं। इसलिये शिक्षा का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य चरित्र-निर्माण है।

४. सांस्कृतिक विकास- जिनके द्वारा शरीर, मन, आत्मा, विश्वास, वेशभूषा, भोजन, रीति-रिवाज संस्कारित हों, परिमार्जित हों, परिशुद्ध हों, उन्हें संस्कार कहते हैं और उनका परिणाम ही संस्कृति है। प्रत्येक व्यक्ति एवं राष्ट्र के विकास के लिये संस्कृति का योगदान महत्वपूर्ण है।

५. वैज्ञानिक दृष्टि का विकास- वैज्ञानिक दृष्टि के बिना अंधविश्वासी, रूढिवादी तथा संकीर्णता, मूढता और जड़ता से युक्त व्यक्ति या राष्ट्र प्रगति करने

के लिए असमर्थ होता है। शिक्षा द्वारा वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करके उपर्युक्त अंधविश्वास आदि दुर्गुणों को दूर करके ही व्यक्ति एवं राष्ट्र प्रगति करने में समर्थ होते हैं।

७.आध्यात्मिक विकास- प्रत्येक आस्तिकवादी शिक्षा का अंतिम लक्ष्य आध्यात्मिक विकास ही है। आध्यात्मिक विकास का अर्थ है- आत्मा में निहित गुणों को जागृत करना, संवृद्ध करना एवं परिपूर्ण करना। वह आध्यात्मिक गुण है- सत् विश्वास, सम्यक् ज्ञान , सत् चरित्र, संयम,आत्मानुशासन, समता, अहिंसा, सेवा, परोपकार, आत्मिक शांति आदि।

७. सामाजिक कुप्रथाओं को दूर करना- 'गतानुगतिको लोकः न लोके पारमार्थिकः' अर्थात् लोक गतानुगतिक अन्धानुकरण करने वाला या परम्परावादी होता है, किन्तु शिक्षित व्यक्ति समाज की कुप्रथाओं के निवारण में उल्लेखनीय योगदान कर सकता है।

८. नेतृत्व के लिये शिक्षा- श्रेष्ठ व्यक्ति जो-जो आचरण करते हैं उन-उन आचरणों का अन्य लोग अनुकरण करते हैं। वे जो प्रमाणित करते हैं अर्थात् सिद्ध करते हैं उसके अनुसार दूसरे लोग भी अनुवर्तन करते हैं। इसलिये कहा है 'महाजनो येन गतः सः पंथाः'' महाजन जिस राह पर जाते हैं उसका समाज के लोग अनुसरण करते हैं। महापुरुषों को अपने-अपने क्षेत्रों में अनेक प्रकार की क्षमताएँ जैसे न्यायप्रियता, दक्षता , साहस, अनुशासन, सहनशीलता, कर्त्तव्यनिष्ठा, निष्पक्षता, अवंचकता, सरलता, सहजता, सत्-चरित्र आदि गुण अनिवार्य हैं। महापुरुषों के इन गुणों को शिक्षा के माध्यम से बच्चों को प्रदान करना होगा। मेरा यह शैक्षिक अनुभव है कि साधारण व्यक्ति में पहले आगे बढ़कर कार्य करने का साहस नहीं होता है। वे स्वयं बढ़कर कार्य नहीं करते हैं, परन्तु दूसरे व्यक्ति आगे बढ़कर कार्य करते हैं तो अन्य व्यक्ति उसे देखकर अनुसरण करते हैं।

९. नागरिकता का विकास- व्यक्ति का समूह ही समाज है। जब तक अच्छे नागरिक नहीं होंगे तो अच्छा समाज नहीं होगा। इसलिये सुयोग्य नागरिक बनना यानी योग्य राष्ट्र का निर्माण करना भी शिक्षा का लक्ष्य हो।

१०. भावात्मक एकता का विकास- संसार में नाना प्रकार के मनुष्य हैं। उनकी योग्यताएँ भिन्न-भिन्न हैं। उनके कर्म भी भिन्न-भिन्न हैं। यह विभिन्नता प्राकृतिक है। इसलिये इस विभिन्नता को लेकर विषमता नहीं फैलाना चाहिये, वाद-विवाद नहीं

करना चाहिये। इसे ही भावात्मक एकता कहते हैं। रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कहा है-

नाना भाषा, नाना जाति, नाना परिधान।
समस्तर माझे देखो मिलन महान्॥

अर्थात् विभिन्न भाषा-भाषी, विभिन्न जाति, विभिन्न परिवेश में भी जो परस्पर में सौहार्द, संगठन है वही भावात्मक एकता है।

११. विश्वमैत्री भावना का विकास- संकीर्ण विचार वाला व्यक्ति अपना-पराये का निकृष्ट भेदभाव रखता है। परन्तु जो उदात्त उच्च विचार वाले होते हैं उनके लिये समस्त विश्व परिवार की तरह होता है। ऐसी उदात्त उच्च भावना को जागृत करना शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है। इसे ही विश्व बन्धुत्व एवं विश्वमैत्री कहते हैं। यथा-

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥

१२. शिक्षा का सार्वभौम विकास- भाव में जो दोष उत्पन्न होते हैं, उन्हें भाव से ही परिशुद्ध किया जा सकता है। दोषों को दूर करने वाली, गुणों का विकास करने वाली शिक्षा में जो दोष हैं, उनकी शुद्धता शिक्षा ही कर सकती है। शिक्षा से विकास होता है, परन्तु कु-शिक्षा या शिक्षा के दुरुपयोग से विनाश भी होना संभव है। इसलिये शिक्षा को प्राप्त करके राक्षस, अहंकारी, शोषणकारी, आलसी, अनुशासनहीन, धूर्त, भ्रष्टाचारी नहीं बनकर अपना सर्वांगीण विकास करना एवं सार्वभौम शिक्षा प्राप्त करना ही शिक्षा का उद्देश्य है।

इस प्रकार से शिक्षा के सभी मूलभूत आयामों के बारे में विचार-विमर्श करने से ही वर्तमान शिक्षा-व्यवस्था में व्याप्त कमियों को दूर करने तथा नैतिक मूल्यों की स्थापना करने में सहायता प्राप्त हो सकती है। प्रसिद्ध शिक्षाविद् रेमण्ट नैतिक मूल्यों की आवश्यकता पर बल देते हुए कहते हैं कि "शिक्षा विकास का वह क्रम है जिससे व्यक्ति अपने आपको धीरे-धीरे विभिन्न प्रकार से भौतिक-सामाजिक वातावरण के अनुरूप बना लेते हैं, साथ ही नैतिक मूल्यों को भी अपना लेते हैं। इन सबसे ऊपर हमें नारी शिक्षा के विकास पर ज्यादा बल देना होगा, जिससे कि आने वाली पीढ़ी के बच्चों को अधिक सुसंस्कारवान बनाया जा सके।

-द्वारा श्री विलास पाण्डेय, बी-१३२, सरोजनी नगर,
नई दिल्ली-११००१६

खमाऊँ सा...!

श्री चन्द्रेश भण्डारी

जी हाँ, इन चार अक्षरों में सिमट कर रह गया है- सांवत्सरिक क्षमायाचना का महान् पर्व। आज के मशीनी युग में मानव भी मशीन बन कर रह गया है और पर्व भी मात्र प्रतीकात्मक रूप में मनाए जा रहे हैं। कोई संवेदना नहीं, उत्साह नहीं, आन्तरिक स्फुरणा नहीं।

संवत्सरी पर्व यानी क्षमायाचना दिवस मनाने का मूल उद्देश्य है कि आदमी अपनी भूलों का प्रायश्चित्त कर सके। जाने-अनजाने में यदि हमने किसी का दिल दुःखाया हो, किसी को भला-बुरा कहा हो, किसी से वैर हो, तो इस दिन खुले हृदय से क्षमा माँग सकें और मन का बोझ हल्का कर सकें, प्यार और स्नेह की गंगा बहा सकें। दुश्मनी को दोस्ती में बदल सकें, पर हो रहा है इसका उल्टा।

हम क्षमा तो माँगते हैं पर किनसे...? अपने प्रिय मित्रों और प्यारे रिश्तेदारों से, लेकिन उनसे कतई नहीं जिनसे हमारा झगड़ा चल रहा हो या बोलचाल बंद हो। तो फिर क्या अर्थ रह जाता है इस पर्व को मनाने का। दुश्मनी और वैर तो खत्म हुआ नहीं, वो तो जस का तस रहा और आजकल तो क्षमा माँगने का भी शार्टकट चल निकला है। बाहर के गाँवों एवं शहरों में क्षमापना कार्ड भेजें, यहाँ तक तो ठीक है, पर अब तो लोग अपने शहर में भी क्षमापना कार्ड भेज कर इतिश्री कर लेते हैं। दूसरा शार्टकट है फोन का। क्षमापना दिवस के दिन सुबह-सुबह फोन की लिस्ट उठाई, दनादन एक के बाद एक तीस-चालीस फोन किए, खमाऊँ सा, बारम्बार खमाऊँ सा और हो गई क्षमापना। एक सुपर शार्टकट और निकल गया है- ६० पैसे का एस.एम.एस., और मिलते ही उलाहना, मैंने एस.एम.एस. किया पर वापस एक एस.एम.एस. नहीं कर सकते थे क्या?

आज के माडर्न जमाने के टीनएजर्स तो और भी आगे निकल गये हैं। हर प्रकार के शब्दों के उनके अपने शार्टकट हैं। एक लड़की क्षमापना पर्व के दिन सुबह अपनी सहेली से बात कर रही थी-

लड़की- हाय टीना, खमा यार।

टीना- ओ, हाँ खम खम!

और फिर इधर-उधर की बात शुरू।

सुबह-सुबह एक बिटिया ने अपनी माँ को क्षमापना के लिये फोन लगाते देखा तो उत्साह में कह बैठी-

बेटी- माँ, उन जयपुर वाली आंटी को भी तो फोन करो ना, जिनसे आजकल तुम्हारी बोलचाल बंद है।

माँ- मैं क्यों करूँ, क्षमापना दिवस क्या सिर्फ मेरे लिये ही है? वो भी तो फोन कर सकती है।

बेटी- माँ, पर कल प्रवचन में महाराज साहब ने तो कहा था कि....

माँ- चल, चल। तू अपना काम कर। बड़ी आई मुझे समझाने वाली।

और बच्ची बेचारी सोचती रह गई कि मैंने क्या गलत कह दिया और एक गलत संस्कार की नींव पड़ गई।

एक पति-पत्नी में काफी दिनों से बोलचाल बंद थी। क्षमापना पर्व आया तो पति ने सोचा, मौका अच्छा है सो उसने एक क्षमापना कार्ड पत्नी को थमा दिया। पत्नी ने क्षमापना कार्ड पढ़ा और उस पर 'सेम टू यू' लिखकर वापस पतिदेव को लौटा दिया। अब हुआ यूँ कि कार्ड के जिस तरफ 'सेम टू यू' लिखा हुआ था, उस तरफ पति की नजर पड़ी नहीं और यह सोचकर कि पत्नी ने कार्ड वापस कर दिया है, पति की आँखों में आँसू आ गये। पति की आँखों में आँसू देखकर पत्नी भी रो पड़ी और "**मुझे माफ कर दो, प्लीज**" कहती हुई पति के चरणों में गिर पड़ी। पति ने भी माफी माँगते हुए पत्नी को गले लगा लिया और सारा वैर-विरोध पल भर में समाप्त हो गया। तो यह फर्क है कार्ड से माफी माँगने में और व्यक्तिशः स्वयं माफी माँगने में।

उपर्युक्त प्रसंग में पति-पत्नी यदि कार्ड के भरोसे रहते तो झगड़ा खत्म ही नहीं होता, उल्टा बढ़ जाता, परन्तु पत्नी द्वारा कहे गये शब्द "मुझे माफ कर दो, प्लीज" ने जादू का काम किया।

कई छोटे-मोटे झगड़े तो मात्र 'सॉरी' कहते ही निबट जाते हैं। फिर क्षमापना पर्व के दिन अपने विरोधी से आगे बढ़कर प्यार से क्षमा माँग लें तो कहना ही क्या? और क्षमा को तो वीरों का आभूषण कहा गया है- **"क्षमा वीरस्य भूषणम्।"**

आइये, आज हम प्रतिज्ञा करें कि आगामी क्षमापना पर्व के दिन हम अपने वास्तविक विरोधियों से क्षमा माँग कर पर्व को सार्थक बनायेंगे।

-ओम शांति, ३४२, कमला नेहरू नगर, जोधपुर

लक्ष्य क्या?

आचार्य विजयरत्नसुन्दरसूरि जी म.सा.

एक बार कागज को अभिमान हो गया। उसने मानव से कहा-

"क्या मेरी ताकत तुम्हारे ध्यान में है? मैं हूँ तो कागज, किन्तु फिर भी आकाश में उड़ सकता हूँ।"

"क्या बात करते हो?"

"इतना ही नहीं मैं तो पानी में भी तैर सकता हूँ।"

"मुझे तो विश्वास नहीं हो रहा है।"

"अरे! आज तक कितनी ही बार मैं आसमान की यात्रा कर लौट आया हूँ।"

"कितनी बार सागर का सफर कर आया हूँ।"

"क्या तुम पानी में भी तैर सकते हो?"

"यदि तुम्हें विश्वास न हो तो मैं तुम्हें अभी तैरकर दिखाता हूँ।"

ऐसा कहकर कागज उड़ा और पानी में जाकर गिरा। अल्प समय में ही वह तैरकर किनारे आ पहुँचा और उसने मानव से कहा-"देख ली मेरी ताकत।"

भीगे हुए उस कागज पर मानव ने अक्षर लिखने का प्रयास किया कि वह फट गया। मानव ने कागज को इतना ही कहा-"दोस्त! तुम्हारा जन्म जिस कार्य के लिए हुआ है यदि वही संभव न हो पाए तो तुम्हारा आसमान में उड़ना व्यर्थ है और सागर में तैरना भी व्यर्थ है।"

प्रचंड पुण्य एकत्रित करने के पश्चात् यह मानवजीवन प्राप्त हुआ, तंदुरुस्त शरीर प्राप्त हुआ, तेज बुद्धि प्राप्त हुई, पुण्य का सहारा प्राप्त हुआ और मानव विपुल संपत्ति का स्वामी बनने हेतु दौड़ा। इसमें वह सफल हो गया। फिर वह सत्ताधीश बनने हेतु दौड़ा। इसमें भी उसे सफलता हासिल हो गई। फिर वह दौड़ा जगत में अपना नाम गुंजाने। इसमें भी वह सफल हो गया।

किन्तु जब शरीर में बीमारी पैदा हुई, वह समाधि नहीं टिका पाया। जब जीवन में प्रतिकूलताएँ आईं, वह प्रसन्न नहीं रह सका। जब वह स्वार्थभंग का शिकार हुआ, वह स्वस्थ नहीं रह पाया और जब मौत मुँह फाड़कर आँखों के सामने आकर खड़ी हो गई तब वह अपने चेहरे पर प्रसन्नता नहीं टिका पाया। ओह! जो मानवजीवन साधना, समाधि, क्षमा के लिए ही प्राप्त हुआ था उस जीवन को मानव ने केवल शरीर, संपत्ति और सत्ता पाने में ही गँवा दिया। विडंबना की यह पराकाष्ठा नहीं है तो और क्या है?

-'कमाल' पुस्तक से साभार

दशवैकालिक सूत्र का जानें हम मर्म (११)

प्रश्न२३. साधनापरक वाक्यों को इंगित करने वाले सूत्र, गाथा (कहीं गाथा, कहीं उसका चरण) लिखकर व्याख्या कीजिये-

(४) **छोटे से छोटे प्राणी की पीड़ा, जिस क्षण हृदय में टीस मारने लगती है, उस क्षण से साधना प्रारम्भ होती है।**

उत्तर- समकित के ६७ बोलों में सम्यक्त्व के एक प्रधान अंग 'अनुकम्पा' को भी दर्शाया गया है। अनुकम्पा के बिना सम्यक्त्व और सम्यक्त्व के बिना साधना का प्रारम्भ नहीं हो सकता। साधना का मूल अनुकम्पा है। बाहर में जीवों के प्रति अनुकम्पा करते-करते साधक आगे बढ़ता हुआ स्वयं पर भी अनुकम्पा करने लगता है। स्वयं पर अनुकम्पा करने का तात्पर्य यह है कि वह ऐसा कोई भी कार्य नहीं करता जिससे आत्मवंचना, कुठाराघात या आत्मा के साथ खिलवाड़ हो, अर्थात् उसका प्रत्येक कार्य आत्मानुभूति, आत्मतुष्टि और आत्मपुष्टि के लिये होता है। स्वयं पर अनुकम्पा करते ही निर्वेद और निर्वेद से परम संवेग की प्राप्ति होती है। प्रत्येक प्राणी उसे 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' नजर आने लगता है। उत्तराध्ययन सूत्र के ३३वें अध्ययन में अनुकम्पा से साता वेदनीय कर्म का बंध होना बताया है अर्थात् अनुकम्पा असाता को साता में बदल देती है। संसार के संसरण को समाप्त करने का अभिलाषी सांसारिक विडम्बनाओं से ऊपर उठ, आत्मभाव के धरातल पर प्रत्येक जीव में अपनत्व की अनादि से अनुभूत अनुभूति को अनुभव कर आत्म विभोर हो **'वेरं मज्झं न केणइ'** के उद्घोष गुँजित कर साधना प्रारम्भ करता है। दशवैकालिक अध्ययन ४ गाथा ९ **'सव्वभूयप्पभूयस्स'** को जीवन सूत्र बना **'मणयदोसे ण मे अत्थि कोई'** से निरन्तर साधना में आगे बढ़ता है। समाधि को वृद्धिंगत करता है। जीवमात्र के प्रति करुणा, दया, अनुकम्पा अत्यन्त अनिवार्य है क्योंकि दया हमें स्वयं की याद दिलाती है। **'आयतुले (पयासे) पयासु'** कहूँ या **'एयं तुलमण्णेसिं'** अथवा तो दशवैकालिक १०/५ गाथा **'अत्तसमे मणिज्ज छप्पिकाए'** अर्थात् पृथ्वी, पानी, तेउ, वायु, वनस्पति के जीवों को जो अपनी आत्मा के समान समझता है, वही

साधना का प्रारम्भ और आत्म-साक्षात्कार कर सकता है। अनुकम्पा के लिये ज्ञाताधर्मकथा में मेघकुमार का उदाहरण मिलता है, जिसमें कहा गया- **'पाणाणुकम्पाए, भूयाणुकम्पाए, जीवाणुकम्पाए, सत्ताणुकम्पाए...'** मेघकुमार ने अनुकम्पा से सम्यक्त्व की प्राप्ति की। प्रत्येक जीव जीना चाहता है', मरना कोई भी नहीं चाहता- **'सव्वे जीवा उ इच्छंति, जीविउं ण मरिज्जिउं'**। अतः प्राणिमात्र के प्रति मैत्रीभाव स्थापित किये बिना साधना प्रारम्भ नहीं हो सकती। आशय यही है कि आत्मभाव के धरातल पर ही साधक का साधना रूपी वृक्ष पुष्पित और पल्लवित होता है।

(५) संकल्प कामना से उत्पन्न हो दुःख पहुँचाते हैं।

उत्तर- वासना से संकल्प उत्पन्न होता है और संकल्पों के वशवर्ती जीव कदम-कदम पर दुःखी होता है।

कहं न कुज्जा सामण्णं, जो कामे न निवारए।
पए पए विसीयंतो, संकप्पस्स वसंगओ॥

-दशवैकालिक अध्ययन २ गाथा १

कामनाओं से पीड़ित साधक संकल्पों-विकल्पों से पग-पग पर खेद पाते रहते हैं। कारण कि कामना अपूर्ति में दुःख तथा कामना पूर्ति पर नई कामना उत्पन्न हो जाती है। अप्राप्त कामनाओं की पूर्ति और प्राप्त कामनाओं के रक्षण तथा उपभोग के लिए उसका मन सदा चिंतित रहता है, इसी कारण शास्त्रकारों ने **'कामे कमाहि कमियं खु दुक्खं'** के माध्यम से बताया कि कामनाओं के कम होने पर दुःख भी कम हो जाता है। अतः जो साधक आत्मरक्षण करना चाहता है, उसे समग्र कामभोगों की वांछा, लालसा, स्पृहा का त्याग करना आवश्यक है।

इसलिए भक्त के हृदय से भावना प्रस्फुटित होती है कि हे प्रभो! आगामी काल में इस मन में कामना न रहे। साथ ही मुझे कुछ नहीं चाहिये, यह सोचकर साधक अकामी हो जाए, यही आध्यात्म का मूल मंत्र है।

(६) मिली हुई स्वाधीनता का दुरुपयोग नहीं करना धर्म है।

उत्तर- प्रायः शक्ति, प्रवृत्ति और अन्तर वृत्ति के संदर्भ में प्राणी स्वाधीन होता है। वह चाहे तो शक्ति से किसी को पीड़ित न कर अभय दे सकता है। इन्द्रिय आदि से विषय सेवन कर सकता है। मन, वचन, काया से बुरे कार्यों में

प्रवृत्त हो सकता है। दुरुपयोग कर सकता है और चाहे तो संयम भी ग्रहण कर सकता है। अन्तर में अतृप्त इच्छाएँ, वासनाएँ जागृत कर सकता है, चाहे तो उनका निरोध भी कर सकता है।

शक्ति का दुरुपयोग नहीं - अहिंसा

प्रवृत्ति का दुरुपयोग नहीं - संयम

अन्तर्वृत्ति का दुरुपयोग नहीं- तप

'धम्मो मंगलमुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो'

जितना-जितना व्यक्ति स्वाधीनता का दुरुपयोग रोकता जाता है, उतना-उतना ही स्वाधीन होता जाता है और जब यह स्वाधीनता परिपूर्ण हो जाती है, अनन्त हो जाती है तब व्यक्ति बंधनमुक्त, शाश्वत, समाधिवान हो जाता है। अतः मिली हुई स्वाधीनता का दुरुपयोग नहीं करना धर्म है।

(७) देह को भोग सामग्री नहीं मानकर साधक मोक्ष की साधन-सामग्री समझ आहार करता है।

उत्तर- **बहिया उड्ढमादाय, नावकंखे कयाइ वि।**

पुव्वकम्मक्खयट्ठाए, इमं देहं समुद्धरे॥ -उत्तरा. ६/१४

साधक की दृष्टि सीप पर नहीं मोती पर रहती है, दीप पर नहीं, ज्योति पर रहती है। ऊर्ध्वगतिक लक्ष्य अपनाकर साधक बाह्य विषयों की आकांक्षा कभी भी नहीं करते। वे अपनी भावनाओं, विचारों सभी को मोक्ष में ही स्थिर करके रखते हैं। इतना ही नहीं, अपनी देह का पोषण भी मात्र अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए ही करते हैं।

दशवैकालिक अध्ययन ५ गाथा ९२- **मोक्खसाहणहेउस्स साहुदेहस्स धारणा।**

मोक्ष के हेतु को ही हृदय में रखकर साधक देह की संभाल करता है। जब देह जीर्ण-क्षीण रूप धारण करता है और लगता है कि अब आयुष्य की कड़ी टूटने वाली है तो मोक्षाभिलाषी आत्मा संलेखना संथारे को अंगीकार करती है। जब तक साधक देह को मोक्ष के नजदीक लेकर जाता है, तब तक ही साधक देह का पोषण करता है।

(८) निजभाव की पूर्ण अभिव्यक्ति से पूर्व विनय से कीर्ति श्लाघा भी मिलती है।

उत्तर- दशवैकालिक ९/२/२ 'एवं धम्मस्स विणओ मूलं' जिसके भावार्थ में बताया- विनय के द्वारा यश कीर्ति, श्लाघ्यश्रुत और निःश्रेयस के फल को साधक प्राप्त करता है। धर्म का मूल विनय है और विनय का उत्कृष्ट फल मोक्ष है। विनय धर्म से अर्जित व्यवहारानुगामी साधक कभी भी लोक निंद्य नहीं होता। वह सभी जगह आदर, सत्कार, पूजा, सम्मान पाता है तथा उत्तरा. सूत्र १/४८ गाथा **'स देवगंधव्वमणुस्स पूइए'** विनीत शिष्य इस लोक में देव, दानव एवं मानवों द्वारा पूजित होता है। वहाँ रज वीर्य समुत्पन्न इस मानव शरीर को छोड़ने के पश्चात् उसकी २ ही गतियाँ हैं, या तो वह सदा के लिए सर्व कर्मों से रहित सिद्ध-बुद्ध-मुक्त हो जाता है या फिर अल्प कर्मयुक्त या मोह जनित क्रीड़ा से रहित महान् ऋद्धि सम्पन्न (दैविक) वैमानिक देव बनता है। विनीत शिष्य गुरु के हृदय में बस जाता है। गुरु की अहैतुकी कृपा प्राप्त कर लेता है। गुरुकृपा प्राप्त वह शिष्य जहाँ कहीं भी जाता है, अपने गुणों की सुवास छोड़ता है, प्रशंसा पाता है। सचमुच गुरु कृपा के बिना की हुई साधना बिना अंक के शून्य जैसी है। अतः जीवन में कुछ प्राप्त करने जैसा है तो वह 'गुरुकृपा' और गुरुकृपा प्राप्त होती है- विनय से, उनकी हर आज्ञा के पालन करने से। (क्रमशः)

सम्पादकीय का शेष...

कन्या भ्रूण हत्या रोकने के लिए १९९४ में बने पी सी पी एन डी टी एक्ट के तहत लिंग परीक्षण करने पर सजा का कड़ा प्रावधान है। पहली बार भ्रूण का लिंग बताने पर क्लीनिक, नर्सिंग होम, मातृ कल्याण केन्द्र आदि संस्थाओं के डॉक्टर को तीन वर्ष की कैद या दस हजार रुपये जुर्माना या दोनों सजा के साथ पाँच वर्ष तक रजिस्ट्रेशन रद्द करने का प्रावधान है। दूसरी बार भ्रूण का लिंग बताने पर पाँच वर्ष की कैद या पचास हजार रुपये जुर्माना या दोनों सजाओं के साथ रजिस्ट्रेशन सदा के लिए रद्द करने का प्रावधान है। अतः अब लिंग परीक्षण का विचार भी मन में लाना उचित नहीं।

भ्रूण हत्या अमानवीय, अनैतिक एवं पंचेन्द्रिय वध का पाप है। यह मानव की क्रूरता एवं अज्ञान का परिचायक है। जो समाज चींटी मारने में हिंसा से बचता है वह समाज भी यदि भ्रूण हत्या में लिप्त हो तो यह उसके क्रूर निर्णय, अज्ञान एवं भय का सूचक है। इसे धार्मिक, नैतिक, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक एवं मानवीय दृष्टि से समुचित नहीं कहा जा सकता। ✦

आओ मिलकर ज्ञान बढ़ाएँ

(काय स्थिति-७)

श्री धर्मचन्द जैन

प्र.२१४ सास्वादन समकित किसे कहते हैं?

उत्तर जिस समकित में आस्वाद मात्र अवस्था रहे, उसे सास्वादन समकित कहते हैं। यह समकित उपशम समकित से गिरने वाले किन्हीं जीवों को प्राप्त होती है। ऐसे जीव जिनके अनन्तानुबंधी कषाय का तो उदय हो गया, किन्तु मिथ्यात्व मोहनीय का उदय नहीं हुआ, उन्हें सास्वादन समकित प्राप्त होती है। सास्वादन समकित में ४ (अनन्तानुबंधी चतुष्क) का उदय, ३ (दर्शनत्रिक) का उपशम, यह अवस्था पायी जाती है।

प्र.२१५ सास्वादन समकित की कायस्थिति जघन्य एक समय किस अपेक्षा से है?

उत्तर किसी जीव को पर्याप्त अवस्था में आयु के अन्तिम समय में सास्वादन समकित प्राप्त हो, वह एक समय सास्वादन समकित (दूसरा गुणस्थान) में रहे और काल कर जाय, काल करते ही मिथ्यात्व को प्राप्त कर ले तो सास्वादन समकित की जघन्य कायस्थिति एक समय की होती है।

प्र.२१६ सास्वादन समकित की उत्कृष्ट स्थिति छः आवलिका किस कारण से है?

उत्तर क्योंकि उपशम समकित से गिरने वाले जीवों में अधिक से अधिक छः आवलिका के पश्चात् तो मिथ्यात्व मोहनीय का उदय नियमा हो ही जाता है तथा जीव मिथ्यात्व गुणस्थान में आ जाता है।

प्र.२१७ सास्वादन समकित एक जीव को कितनी बार प्राप्त हो सकती है?

उत्तर सास्वादन समकित एक जीव को एक भव की अपेक्षा से जघन्य एक बार, उत्कृष्ट दो बार प्राप्त हो सकती है। जबकि अनेक भवों में

जघन्य दो बार, उत्कृष्ट पाँच बार प्राप्त हो सकती है।

प्र.२१७ सास्वादन समकित किन-किन जीवों में पायी जाती है?

उत्तर सास्वादन समकित चारों ही गति के जीवों में पायी जाती है। इसमें नरक के ७ (पर्याप्त), तिर्यंच के १८ (बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय, ५ असंज्ञी पंचेन्द्रिय, इन आठ के अपर्याप्त तथा ५ संज्ञी पंचेन्द्रिय के अपर्याप्त तथा पर्याप्त), मनुष्य के ३० (१५ कर्मभूमिज के अपर्याप्त, पर्याप्त), देवता के १४३ (१० भवनपति, १६ वाणव्यन्तर, १० जृम्भक, १० ज्योतिषी, १२ देवलोक, ९ लोकान्तिक, इन ६७ के अपर्याप्त-पर्याप्त तथा ९ ग्रैवेयक के पर्याप्त) इस प्रकार ७+१८+३०+१४३ =१९८ जीव के भेद पाये जाते हैं।

प्र.२१८ सास्वादन समकित में जीव आयुष्य का बंध करता है अथवा नहीं?

उत्तर सास्वादन समकित में जीव आयुष्य का बंध करता भी है और नहीं भी। कारण कि जिन जीवों में पर्याप्त अवस्था में जब सास्वादन समकित पायी जाती है तब वे जीव अगले भव की आयु का बंध कर सकते हैं।

किन्तु जिन जीवों में अपर्याप्त अवस्था में सास्वादन समकित पायी जाती है, वे उस समय अगले भव की आयु का बंध नहीं कर सकते, क्योंकि ऐसे जीवों में सास्वादन समकित पिछले भव से लाई हुई होती है, वह सास्वादन समकित छः आवलिका से अधिक काल तक नहीं रहती है। सास्वादन समकित वाले जीव अपर्याप्त अवस्था में काल करते ही नहीं हैं। पर्याप्त होकर ही काल करते हैं। जब तक उनकी वर्तमान आयु का दो तिहाई भाग नहीं बीत जाये तब तक वे अगले भव की आयु का बंध कर ही नहीं सकते। अपर्याप्त अवस्था में आयु का दो तिहाई भाग पूरा होना संभव न होने से सास्वादन समकित वाले जीव अपर्याप्त अवस्था में आयु का बंध नहीं कर सकते।

प्र.२१९ क्या सास्वादन समकित में रहे हुए जीव मरण को प्राप्त हो सकते हैं?

उत्तर जिन जीवों में अपर्याप्त अवस्था में सास्वादन समकित है, वे जीव मरण को प्राप्त नहीं हो सकते। क्योंकि यह नियम है कि किसी भी

प्रकार की समकित वाला जीव अपर्याप्त अवस्था में मरण को प्राप्त होता ही नहीं है।

पर्याप्त अवस्था में सास्वादन समकित में रहे जीवों की यदि वर्तमान भव की आयु पूर्ण हो जाय तो वे मरण को प्राप्त हो सकते हैं तथा अगले भव में सास्वादन समकित साथ में लेकर उत्पन्न हो सकते हैं। इसी अपेक्षा से संख्यात वर्ष की आयु वाले तिर्यंचों एवं मनुष्यों के अपर्याप्त अवस्था में सास्वादन समकित मानी जाती है।

प्र.२२० कौनसी उपशम समकित से गिरने वाले जीवों को सास्वादन समकित प्राप्त होती है?

उत्तर उपशम समकित दो प्रकार की होती है- १. प्रथमोपशम २. द्वितीयोपशम। प्रथमोपशम को ग्रन्थिभेदजन्य भी कहते हैं अर्थात् बिना उपशम श्रेणि के जो ग्रन्थि भेद जन्य उपशम समकित है, वह प्रथमोपशम कहलाती है।

द्वितीयोपशम को श्रेणिजन्य भी कहते हैं अर्थात् उपशम श्रेणि सहित जो उपशम समकित है, उसे द्वितीयोपशम कहते हैं। प्रथम बार आने पर प्रथमोपशम तथा दूसरी बार आने पर द्वितीयोपशम, ऐसा अर्थ नहीं करना चाहिये।

सास्वादन समकित उक्त दोनों ही प्रकार की उपशम समकित से गिरने वाले जीवों को प्राप्त हो सकती है। **(क्रमशः)**

-रजिस्ट्रार, अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर

ईर्ष्या व द्वेष सर्वथा हानिकारक

ईर्ष्या एवं द्वेष आत्मा के लिए अहितकर हैं तथा आत्मविकास में बाधक हैं। ईर्ष्या एवं द्वेष से आत्मा में रहे हुए स्वाभाविक गुणों पर पर्दा पड़ जाता है, जिससे कई बार विवेक खो जाता है तथा व्यक्ति न करने जैसे कार्य कर बैठता है अथवा नहीं कहने जैसी बात कह देता है। परिणामस्वरूप कटुता का वातावरण बन जाता है। छोटी सी चिंगारी समय रहते नहीं बुझाई जाए तो उत्तरोत्तर ज्वालामुखी बन सकती है। इसी प्रकार ईर्ष्या व द्वेष से उत्पन्न वैर यदि तत्काल समाप्त नहीं किया जाता है तो वैर की भावना भव-भवान्तरों तक पीछा नहीं छोड़ती है।

- 'जीवन दर्पण' पुस्तक से साभार

धारावाहिक (क्रमशः३१)

जम्बूकुमार

जैनदिवाकर श्री चौथमल जी म.सा.

पूर्ववृत्तः- बन्दर के दृष्टान्त से पद्मश्री जम्बूकुमार को सीख देते हुए कहती है- "असंतोष में परम दुःख है, अतः मनुष्य भव को प्राप्त कर उसमें संतोष रखो अन्यथा देव बनने की आशा में साधु-वृत्ति को अपनाकर आप वैसे ही पछताओगे, जैसे वह बन्दर पछताया था।" प्रत्युत्तर में जम्बूकुमार कहते हैं-

---

प्रिये! तुमने दृष्टान्त की योजना करने में अपने चातुर्य का परिचय दिया। पर इस दृष्टान्त का जो निष्कर्ष निकलता है वह सर्वत्र लागू नहीं होता। यदि प्रत्येक परिस्थिति में संतुष्ट ही रहा जाय और अपने विकास का प्रयत्न न किया जाए तो उन्नति के लिए अवकाश ही न रहेगा। संसार में अनेक व्यक्ति अपनी-अपनी शक्तियों के विकास में निरन्तर दत्तचित्त रहते हैं। इसी कारण उन्हें असाधारण शक्ति प्राप्त होती है। तुम्हारा कथन मानने से संसार की समस्त प्रगति ही रुक जाएगी। जिसे जितना ज्ञान प्राप्त हो गया है वह उतने में ही संतुष्ट होकर बैठा रहे तो कोई पारंगत विद्वान् नहीं बन पाएगा। जिसे जितना बल मिला है वह उसको पर्याप्त समझ ले तो कोई बलिष्ठ नहीं बन सकेगा। इस प्रकार समस्त प्रगतियों का प्रतिरोध करने वाला तुम्हारा कथन मान्य नहीं हो सकता।

दूसरी बात यह है कि तुम्हारा दृष्टान्त अपने आप ही खण्डित हो रहा है। वानर-वानरी यदि पहले ही अपनी अवस्था में संतोष मान बैठते तो उन्हें मनुष्य बनने का अवसर ही न मिलता। वे अपनी वर्तमान पशु अवस्था में असंतुष्ट हुए तभी मनुष्य बन सके थे। अतएव प्राप्त अवस्था से अधिक श्रेष्ठतर अवस्था को प्राप्त करने के लिए प्रत्येक प्राणी को प्रकृष्ट प्रयत्न करना चाहिए, जैसा कि वानर-वानरी ने किया था।

तीसरी बात यह है कि जहाँ सांसारिक भोगोपभोगों के साधनों का संचय होता है, उनके त्याग के विरुद्ध भावना होती है, त्याग करने से दुःख होता है और विषयभोग की सामग्री का अधिक से अधिक संग्रह करने की

भावना होती है, वहीं लोभ समझना चाहिए। जिस प्रवृत्ति से सांसारिक भोगोपभोग का परित्याग होता है, आरम्भ-परिग्रह के प्रति त्याग की भावना उत्पन्न होती है, विषयभोगों की सामग्री से घृणा पैदा होती है, ममता का परिहार होता है वंह प्रवृत्ति लोभ-जन्य नहीं कहलाती। ऐसी प्रवृत्ति लोभ की विरोधिनी है। यह प्रशस्त प्रवृत्ति है। इसी प्रवृत्ति पर धर्म निर्भर है। मैं अपने शुद्ध आत्मस्वरूप की प्राप्ति करने के लिए जगत का यह विशाल वैभव त्याग रहा हूँ, यह लोभ है या लोभ का त्याग है, यदि यह लोभ का परित्याग है तो यह दृष्टान्त मुझ पर लागू नहीं हो सकता।

पद्मश्री! यदि विवेक के साथ विचार करो तो यह तुम्हें बखूबी समझ में आयेगा। जैसे वानर ने भोगे हुए विषयों में संतोष न मानकर अधिक विषय सुख भोगने के लिए प्रयत्न किया उसी प्रकार तुम अब तक भोगे हुए विषय-सुख से संतुष्ट न होकर अधिक विषय-सुख की कामना कर रही हो। तुम्हारा यह असंतोष अवश्य ही पश्चात्ताप का कारण होगा।

जो लोग जगत की मोह-माया में अधिक मग्न रहते हैं और कनक-कामिनी के क्रीत किंकर बन जाते हैं- उनकी दशा अंगालक के समान होती है।

पद्मश्री- अंगालक कौन था?

जम्बूकुमार- अंगालक एक लकड़हारा था। वह जंगल से लकड़ियाँ लाकर कोयले बना कर बेचता और अपनी आजीविका चलाता था। नित्य के अनुसार वह एक दिन लकड़ियाँ लाने जंगल में गया। साथ में पानी की 'दीवड़' भर ली थी। ग्रीष्म ऋतु थी। कड़ी प्यास लगी और जितना पानी पास में था वह सब पी गया। फिर भी उसकी प्यास नहीं बुझी। प्यास बुझाने का और कोई जरिया न होने से वह किसी तरह भारे में लकड़ियाँ बाँधकर और सिर पर लादकर गाँव की ओर चला। प्यास के मारे उसका गला सूख रहा था, जीभ तालु से चिपक गई थी। उसे ऐसा जान पड़ने लगा कि अब प्राण निकलने ही वाले हैं। वह थक कर सुस्ताने के लिए एक पेड़ की छाया में बैठ गया। ठण्डी हवा के कुछ झोंके आए और थकावट के कारण उसे नींद आ गई। नींद में उसे एक स्वप्न आया। उसने देखा- मैंने नदी, तालाब और कुएँ का खूब पानी पीया, पर मेरी प्यास बुझती ही नहीं है। वह स्वप्न देखकर जाग उठा। प्यास के मारे गला सूख रहा था। आखिर वह वहाँ से उठा और कुछ दूरी पर एक

जलाशय के पास पहुँचा। प्यास के मारे वह जल्दी-जल्दी जलाशय में घुसा तो दलदल में फँस गया। न तो आगे बढ़कर वह पानी तक पहुँच सकता था और न पीछे लौट सकता था। वह बड़ी मुसीबत में फँस गया। सोचने लगा- यह काला-काला कीचड़ नहीं बल्कि प्राणहारी यमराज है, जिसने मुझे अपने फंदे में फांस लिया है। उसका गला प्यास के कारण रुँधने लगा। मृत्यु समीप आती दिखाई देने लगी।

अन्त में, शरीर में थोड़ी बहुत शीतलता लाने के लिए उसने गीली मिट्टी शरीर पर पोत ली और कीचड़ में छोटा-सा पानी का गड्ढा करके घास के ऊपर पानी की बूंद ले ले कर जीभ से लगाने लगा। पर ज्यों-ज्यों वह जीभ से पानी लगाता था त्यों-त्यों उसकी प्यास प्रबल से प्रबलतर होती जाती थी। थोड़ी ही देर के बाद शरीर पर पोती हुई मिट्टी सूख गई और उससे चमड़ी खिंचने लगी। इससे उसकी वेदना दुगुनी हो गई।

इतने में एक दयालु पुरुष उस ओर आ निकला। अंगालक की दुर्गति देख उस दयालु का दिल दया से द्रवित हो उठा। उसने अंगालक को कीचड़ से निकाला, उसके शरीर की मिट्टी धो दी और जल पिलाया। अंगालक को अत्यन्त शांति मिली। उसे आज जल का वास्तविक मूल्य मालूम हुआ।

प्रिये! इस दृष्टान्त पर भलीभाँति विचार करो। देखो, अंगालक के समान संसारी जीव है, लकड़ी काट कर कोयले बनाने के समान पन्द्रह कर्मादान रूप व्यापार है। अशुभ कर्म रूपी प्यास लगती है। परन्तु भोग रूप जल न मिलने के कारण यह जीव अत्यन्त दुःखी होता है। अंगालक जैसे जल के अभाव में अत्यन्त आकुल-व्याकुल हो गया था उसी प्रकार भोग रूप जल के अभाव में विषय-लोलुप जीव तृष्णान्ध होकर घोर संताप, तीव्र वेदना का अनुभव करता है। जैसे अंगालक ने घास के तिनके से अपनी प्यास बुझाने का प्रयत्न किया था उसी प्रकार यह जीव सुकृत रूपी तिनके से विषय रूपी जल पी कर अपनी अभिलाषा पूर्ण करना चाहता है। पर जैसे अंगालक की तृष्णा बुझी नहीं, अपितु ज्यादा बढ़ी थी उसी प्रकार जीव की विषय अभिलाषा भोग से घटती नहीं है, बढ़ती जाती है। अंगालक ने शांति प्राप्त करने के लिए शरीर पर गीली चिकनी मिट्टी लपेट ली थी वैसे ही यह जीव सांसारिक सुख-शांति पाने के लिए निकाचित पाप कर्मों से लिप्त होता है। सूर्य के ताप से मिट्टी सूख जाने

पर अंगालक को और अधिक कष्ट हुआ था इसी प्रकार निकाचित पाप कर्मो का उदय रूप ताप पड़ने पर जीव को और अधिक वेदना होती है। किसी दयालु परोपकारी ने पानी पिलाकर और शरीर धोकर अंगालक को सुखी किया था उसी प्रकार श्री सुधर्मा स्वामी क्रिया रूप जल से संसारी जीवों के पाप रूपी कीचड़ को हटाकर, आत्मिक सुख रूप निर्मल जल पिलाकर सुखी कर रहे हैं।

प्रिये! इसलिए मोह माया का त्याग करके आत्मीय सुख के अथाह सागर में रमण करने जा रहा हूँ। तुम मेरा हित चाहती हो, मुझे सुखी देखना चाहती हो तो बाधक न बनो। मैं भी तुम्हारा कल्याण चाहता हूँ। मेरी हार्दिक इच्छा है कि तुम भी अनन्त सुख की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करो। दीक्षा लेकर दुःखों का अन्त करो।

जम्बूकुमार के इस प्रकार समझाने पर पद्मश्री का मन भी वैराग्य से पूर्ण हो गया। उसने सोचा- स्वामी जिस कल्याणपथ पर प्रयाण करने को कटिबद्ध हो रहे हैं उसमें कंटक बनना अपनी अधोगति को आमंत्रित करना है। मुझे स्वयं ही इस पथ पर चलना चाहिए। ऐसा विचार कर वह समुद्रश्री की भाँति दीक्षा धारण करने को तैयार हो गई और एक किनारे समुद्रश्री के पास जा बैठी।

(क्रमशः)

(जम्बूकुमार द्वारा प्रतिबोध पाकर पद्मश्री भी धर्म मार्ग पर अग्रसर हो गई। यह देखकर अन्य स्त्रियाँ क्या प्रयत्न करती हैं, पढ़िए अगले अंक में)

क्षमापना के पद्य

संदीप फाफरिया 'जैन'

क्षमा सार है जीवन का, इसे न समझो व्यापार।
क्षमा हृदय में धारण करो, करने आतम का उद्धार।।१।।
क्षमा दीजिए क्षमा लीजिए, करिये जीवों पर उपकार।
क्षमा वीरों का आभूषण है, मनुष्य जीवन का सार।।२।।
क्षमा जगत में है बड़ी, जो सर्वगुणों की खान।
क्षमा जो विनय के संग मिले, बने व्यक्तित्व महान्।।३।।
मैत्री करना हो जग से, सहो सदा अपमान।
क्षमा भाव से बन्धुओं, मिटता वैर विकार।।४।।

-उज्जैन (म.प्र.)

संस्कारों की खाद : जीवन की बुनियाद

साध्वी नगीनाश्री जी म.सा.

अभिभावक समझें कि परिवार के प्रति उनका क्या दायित्व है? परिवार का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग है- बालक। परिवार विशाल वटवृक्ष है, तो बालक उसका बीज है। बच्चे के लिये माता-पिता की स्नेहिल गोद ही उसकी दुनियाँ है। माँ की मुस्कराहट में बच्चों के अहसासों की दुनियाँ के चाँद-सितारे खिल उठते हैं और माँ की वक्र भृकुटि में अंधेरी रात घिर आती है।

अभिभावकों के हर क्रिया-कलाप को बच्चा बड़े गौर से पढ़ता है, अनुसरण करता है। उनके जीने का ढंग, व्यवहार और मूल्यों को एक 'ब्लोटिंग पेपर' की तरह बच्चा अपने भीतर सोख लेता है। उसका मन कच्ची मिट्टी की तरह होता है। अभिभावकों के आचरण की जैसी छाप अंकित होती है, उसी पर निर्भर करती है बच्चों के पूर्ण व्यक्तित्व की संरचना और उनका भविष्य।

अनुशासन के नाम पर कई घरों में इतना दमन चक्र चलता है कि बच्चों का विकास प्रायः गमलों में लगे फूल से अधिक नहीं हो पाता। बच्चों की क्षमता और उनके व्यक्तित्व का अंकन किये बिना किसी राह पर धकेल देना अन्याय है। इससे बच्चों के मन में माता-पिता के प्रति विरक्ति की भावना भर जाती है फिर कुण्ठा, आक्रोश और विक्षोभ के भाव प्रतिहिंसा के रूप में फूट पड़ते हैं।

माता-पिता बच्चों के भविष्य की अनेक कल्पनाएँ संजोते हैं। उज्ज्वल भविष्य के सपने देखते हैं, किन्तु उनके बौद्धिक, भावनात्मक विकास के प्रति सजग नहीं रहते। अपेक्षा है माँ की गोद रूप टकसाल में बच्चे इस प्रकार ढल पायें कि वे परिश्रमी, उदार, कर्त्तव्यनिष्ठ, सहिष्णु बनकर पारिवारिक जीवन को स्वर्गीय आनन्दानुभूति दे सकें।

अच्छी फसल के लिये अच्छी खाद की जितनी अनिवार्यता है, उतना ही अनिवार्य है जीवन-निर्माण में संस्कारों के सिंचन की।

रेडियो, सिनेमा, टेलीविजन आदि मनोरंजन के साधन बाल-मानस को भौतिक चकाचौंध में इतना डुबो देते हैं कि बालक यौवन की दहलीज पर

कदम रखते ही विद्रोही बन जाता है। वहाँ जो कुछ देखता है, सीखता है उसकी प्रयोग भूमि बना देता है अपना परिवार।

व्यक्ति जिन परिस्थितियों में रहता है वैसा ही व्यक्तित्व का निर्माण हो जाता है। एक ही वातावरण में पले दो व्यक्तियों में अभियोजन की प्रणाली-भिन्नता के कारण भिन्न व्यक्तित्व का निर्माण हो सकता है।

वंशानुक्रम से अधिक प्रभाव वातावरण का होता है। समुचित वातावरण में व्यक्तित्व का विकास वैसे ही होता है जैसे नर्सरी में पौधों का।

वातावरण का महत्त्वपूर्ण परिवेश है- परिवार। यहाँ से ही बच्चे का सामाजिक जीवन प्रारंम्भ होता है। बौद्धिक, संवेगात्मक और सामाजिक विकास का स्वरूप बाल्यकाल में परिवार में ही निर्धारित होता है।

जिस परिवार में कुशल व्यवहार, स्वस्थ विचार, निर्मल आचार इन तीन सूत्रों का समायोजन उचित रूप से पाया जाता है वहाँ बच्चों का संस्कारी बनना सहज है।

जिन रिश्तों पर कभी नाज हुआ करता था, आज उन्हीं पर काला पर्दा गिरा हुआ है। धरती पर सुख चैन से रहने वाला मनुष्य अचानक अपनी ही गिरफ्त में बुरी तरह छटपटा रहा है किसी अज्ञात और सारहीन पीड़ा को सीने में छुपाये। यदि खून के रिश्तों में सुराख होती रही, संदेह का दीपक जलता रहा तो एक दिन भारतीय समाज गहरे अंधेरे में उतर जायेगा। आधुनिकता के नाम पर पनपी यह विचारहीनता आखिर कहाँ जाकर दम तोड़ेगी?

अशांति के कगार पर खड़ी इस पारिवारिक समस्या का समाधान यही होगा कि प्रारंभ से ही संस्कारों का सिंचन किया जाये।

पश्चिम में परिवार नाम की संस्था जीर्ण शीर्ण हो चुकी है। बच्चों का माँ-बाप के प्रति कोई दायित्व नहीं। औपचारिकताओं के अतिरिक्त कोई रिश्ता शेष नहीं रहा। जमाने की हवा ने व्यक्ति की सोच, उसकी मानसिकता और उसके भीतर के अहसास को ही बदल दिया है। अतः यह समझना आवश्यक है कि संस्कारों की खाद ही जीवन की असली बुनियाद है। वह बुनियाद बालकों को माता-पिता, दादा-दादी एवं नाना-नानी ही दे सकते हैं।

EGO AND GREED LEADS TO UNHAPPINESS AND SORROW

उपन्यास (२)

सिद्धगिरि का यात्री

उपाध्याय श्री केवलमुनि जी म.सा.

पूर्ववृत्त- मोहन के पिता नहीं थे, उसकी माँ ही ईमानदारी से मेहनत-मजदूरी करके घर चलाती थी। माँ मोहन में परोपकार और दयालुता के बीज कहानियों के माध्यम से वपन करती रहती थी। एक बार परोपकार का स्वरूप बताते हुए माँ कहती है-

मानव चार प्रकार के होते हैं-

(१) जो अपना स्वार्थ त्यागकर भी परोपकार करते हैं। इनकी दृष्टि में परोपकार ही मुख्य होता है।

(२) जो अपना स्वार्थ सिद्ध करने के साथ-साथ परोपकार भी करते चलते हैं।

(३) जो अपना स्वार्थ सिद्ध करने के बाद परोपकार करते हैं।

(४) जो अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं।

वास्तविक रूप में प्रथम प्रकार के मानव ही परोपकारी कहे जाने योग्य हैं।

मोहन बोला - "माँ! तूने तो लम्बी-चौड़ी व्याख्या कर दी। मैं कुछ समझ ही न सका। मुझे तो थोड़े शब्दों में बता, परोपकारी किसे कहते हैं?"

माँ बोली - "बेटा ! सच्ची बात तो यह है कि जो अपने स्वार्थ को छोड़ दे और किसी दूसरे का काम पूरा कर दे, वही परोपकारी है।"

मोहन ने ऐतराज किया-"तब तो माँ! मैं अपना काम कभी पूरा नहीं कर सकूँगा। जीवन में असफल ही हो जाऊँगा। परोपकार तो स्वयं के लिए हानिकारक है।"

माँ ने समझाया - "नहीं बेटा! परोपकार दूसरों के लिए तो हितकारी है ही, साथ ही अपने लिए भी शुभ है। परोपकारी की कोई भी शुभ इच्छा अधूरी नहीं रहती; परिस्थितियाँ ऐसी बनती हैं कि उसकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति भी स्वाभाविक ढंग से हो जाती है। कोई इसे भाग्य कहते हैं,कोई भगवान् की कृपा, कुछ भी कह लो परोपकारी का अपना उपकार प्रकृति करती रहती है।"

"हाँ, माँ यह बात तो सही है, देख अपनी पड़ौसन राधा है न? उसकी

माँ परसों बहुत बीमार हो गई थी, उसकी सांस रुक-रुक कर चल रही थी, राधा के पिताजी गाँव गये हुए थे तो राधा ने रिरियाते हुए मुझसे कहा- "मोहन! तू जल्दी से वैद्यजी को बुलाकर ला, मेरी माँ बहुत बीमार है, मरने जैसी है, तू जल्दी जा! मेरी माँ को बचा ले।"

"और तूने क्या किया बेटा?" माँ ने पूछा।

"मैं पंडितजी से पढ़कर खाना खाने घर आ रहा था, रास्ते से ही तुरन्त दौड़कर गया, रामप्रसाद वैद्य को बुलाकर साथ लेकर आया, वैद्य जी ने नाड़ी देखी और बोले - "मैं दो पुड़ियाँ भेज रहा हूँ, अभी एक पुड़ियाँ चटा देना, तबियत ठीक हो जायेगी।" मैं वैद्यजी के साथ गया, दवा लेकर वापस आ रहा था तो रास्ते में क्या हुआ? मालूम है?"

"क्या हुआ?" माँ ने पूछा।

"अपने नगरसेठ हैं न धनदेव। उनको बुढापे में बेटा हुआ है, वे सभी को चार-चार लड्डू और एक-एक चाँदी का सिक्का अपने हाथ से बाँट रहे थे, मैं उधर से दवा लेकर आ रहा था तो मुझे भी उन्होंने बुलाकर एक चाँदी का सिक्का और चार लडडू दे दिये?"

"तुमने उसका क्या किया?' माँ ने आश्चर्य से पूछा।

"लड्डू तो मैंने खा लिये,और सिक्का राधा को दे दिया। उसने माँ की दवाई के लिए वह खर्च कर द्रिया, उसकी माँ मरते-मरते बच गई। आज तो आंगन में बैठी धूप खा रही थी और वह कह रही थी - "मोहन ने ही मेरी जान बचाई है।"

"हाँ, तो बेटा देख लिया न? परोपकार का फल कितना नगद मिलता है, तुझे लड्डू भी मिले और तेरा यश भी हुआ......" माँ ने प्रसन्नता से पुलकते हुए मोहन के सिर पर हाथ फिराया - "मेरा बेटा बड़ा होकर सबका भला करेगा, इसका भला होगा।"

तभी पड़ौसी राधा गुन-गुनाती आ गई -

"जो करेगा भलाई, वो खाएगा मलाई।
दुनिया उसके गुण गायेगी,
होंगे राम सहाई .....॥ ल ल ला...."

इसी प्रकार की सुन्दर शिक्षाएँ माँ अपने पुत्र मोहन को देती रहती।

उसके पास धन नहीं था; पर अनुभवों की और सद्गुणों की अपार पूँजी थी, वह पूँजी सद्संस्कारों के रूप में पुत्र को देती रहती थी।

एक दिन मोहन की माँ को तेज बुखार आ गया। कमजोर तो पहले ही थी, ज्वर ने उसे और तोड़ दिया। बिस्तर पकड़ लिया उसने। उसे देखने पड़ौस की अन्य स्त्रियाँ आईं। उसकी ऐसी दशा देखकर पूछने लगी -

"तुझे क्या हुआ मोहन की माँ?"

"बुखार आ गया है।" मोहन की माँ ने बताया।

स्त्रियों ने औपचारिक बात कही-"बुखार ही तो है। जल्दी ही अच्छी हो जाओगी, चिन्ता मत करो।"

"चिन्ता तो मुझे सिर्फ मोहन की है। यह अधिक पढ़ा लिखा भी नहीं है कि नौकरी कर सके, और घर में पूँजी नहीं तो व्यापार का सवाल ही नहीं उठता। बस, यही चिन्ता है कि मोहन का जीवन कैसे व्यतीत होगा? जाने इसके भाग्य में क्या लिखा है? मेरे मोहन का क्या होगा.....?"

और मोहन की माँ की आँखों से आँसू बहने लगे।

स्त्रियों ने सुझाव दिया- "बहन! यहाँ से १०० कोस दूर सिद्धगिरि नाम का एक विशाल पर्वत है। सुना है वहाँ एक सिद्ध योगी रहते हैं। वे बता सकते हैं कि मोहन का भाग्य कैसा है और कब जागेगा? उनकी भविष्यवाणी बिल्कुल सत्य निकलती है। हमारी मानो तो मोहन को वहाँ भेज दो। मोहन का भविष्य जानकर तुम्हें संतोष हो जायेगा, चिन्ता मिट जायेगी और तेरे लिए भी बाबा से कोई दवा लेता आयेगा।"

यह बात मोहन की माँ की समझ में आ गई। उसने मोहन को सिद्धयोगी के पास भेजने का निश्चय कर लिया।

स्त्रियाँ सुझाव देकर चली गईं।

मोहन जैसे ही बाहर से घर में आया तो माँ ने प्यार से कहा -

"बेटा मोहन! एक काम करेगा?"

"माँ! यह कैसी बात कही तूने? आज तक मैंने तेरी कोई बात टाली है क्या? बता," मोहन ने उत्तर देने के बजाय प्रतिप्रश्न कर दिया।

माँ ने पुत्र के सिर पर हाथ फिराकर कहा -

"मेरा मोहन, राम जैसा आज्ञाकारी है तो माँ की बात क्यों टालेगा?"

“तो फिर तुझे यह शंका क्यों हो गई कि मैं तेरा कहना नहीं मानूँगा, तेरी बात टाल दूँगा।” मोहन के शब्द थे।

“मैंने तो वैसे ही पूछ लिया। तू बुरा मान गया।”

“माँ! तू काम बता।”

“माँ ने बताया-

“पुत्र! यहाँ से सौ कोस दूर सिद्धगिरि नाम का एक पर्वत है। वहाँ एक सिद्धयोगी रहते हैं। उनके पास दूर-दूर से लोग आते हैं, अपना भविष्य पूछते हैं, वे प्रसन्न होकर जिसका भविष्य बताते हैं, बिल्कुल वैसा ही होता है, तू भी वहीं चला जा। उस योगी से जाकर पूछना कि 'मेरा भाग्योदय' कब होगा?”

“माँ! पूछने से क्या होगा? जब भाग्योदय होना है हो जायेगा; अभी से क्या चिन्ता लग गयी तुझे? सूरज तो जब उगना है तभी उगेगा क्या बार-बार घडी देखने से या पूछने से जल्दी उगेगा?”

“बेटा, यह तो ठीक है, किंतु यह तो पता चले कि तेरे भाग्य का सूरज कब उगने वाला है, बस इतनी ही चिन्ता है मुझे।”

“अरे माँ! मुझे तेरी चिन्ता है। मैं तो समझ रहा था कि तू अपना कोई काम कहेगी और तू मेरे भाग्य को ले बैठी।”

बेटे के इन शब्दों से माँ का दिल भर गया। वह समझ गयी कि उसका पुत्र उसकी चिन्ता करता है। माँ ने कहा -

“तो तू कब जा रहा है?”

“इतनी जल्दी क्या है? पहले तू अच्छी हो जा। उसके बाद जब भी कहेगी चला जाऊँगा।”

“मेरी फिकर मत कर। मैं तो अच्छी हो ही जाऊँगी।”

“तो मैं भी चला ही जाऊँगा।” मोहन ने हँसकर कह दिया।

माँ समझ गयी कि मोहन मेरे स्वस्थ होने के बाद ही जायेगा। उसने भी जाने का अधिक आग्रह नहीं किया।

मोहन की माँ को तो स्वस्थ होना ही था। साधारण बुखार ही था। दो-तीन दिन में उतर गया। कमजोरी थी वह पाँच-सात दिन में निकल गई। वह काम करने योग्य हो गई।

एक दिन माँ ने मोहन के हाथ में पाथेय दिया और साथ ही उसकी

जन्मपत्री देकर कहा - ''यदि सिद्धयोगी जन्मपत्री देखना चाहें तो दिखा देना।'' इन शब्दों के साथ शुभाशीष देकर रवाना कर दिया।

मोहन ने जन्मपत्री हिफाजत के साथ रखी, माँ के पैर छुए, आशीर्वाद लिया और पाथेय लेकर सिद्धगिरि की ओर चल दिया। *(क्रमशः)*

संघ द्वारा विभिन्न श्रेणियों में सम्मानार्थ प्रविष्टियाँ आमन्त्रित है

संघ-रत्न सम्मान

संघ उन्नयन, चतुर्विध संघ सेवा व संघ संचालन में उल्लेखनीय योगदान हेतु।

आचार्य श्री हस्ती स्मृति सम्मान

जैन आगम, जैन दर्शन व जैन जीवन पद्धति के क्षेत्र में लेखन,शोध व जैन सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार में विशिष्ट योगदान।

युवा प्रतिभा शोध सम्मान (उम्र ४५ वर्ष अधिकतम)

प्रशासनिक चयन-राज्य स्तरीय व केन्द्रिय प्रशासनिक सेवा, न्यायाधिपति आदि विशिष्ट पदों पर चयन।

प्रोफेशनल विशिष्ट- डॉक्टर, इंजीनियर, चाटर्ड एकाउन्टेट, कम्पनी सचिव, एम.बी.ए. व अन्य प्रोफेशनल कोर्स में योग्यता सूची में स्थान पाने पर।

शोध- वैज्ञानिक खोज (अहिंसा व जैन सिद्धान्तों को पुष्ट करने वाली)।

साधारण- चतुर्विध संघ सेवा, विशेष धार्मिक अध्ययन, धार्मिक लेखन आदि।

विशिष्ट स्वाध्यायी सम्मान(एक श्राविका,एक युवा,एक वरिष्ठ स्वाध्यायी)

कम से कम १० वर्ष स्वाध्यायी (पर्युषण पर्वाराधना) के रूप में सक्रिय सेवा।

युवा स्वाध्यायी के लिए आवश्यक होने पर सेवा वर्ष में छूट दी जा सकती है।

गुणी अभिनन्दन

तपस्या- कम से कम पाँच वर्ष तक एकान्त, दीर्घ तपस्या, दीर्घ संवर-साधना या अन्य विशिष्ट तप।

अन्य- सेवा, साधना, संघ उन्नयन में योगदान, चतुर्विध संघ-सेवा, विद्वान्।

-नवरतन डागा, मंहामंत्री

अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर

क्यों टूटते- बिखरते हैं परिवार?

श्री पदमचन्द गाँधी

गृहस्थ-जीवन ऊर्जा का एक महासागर है, बशर्ते कि वह संयुक्त हो, संगठित हो। यह एक तरंग की तरह है, एक बीज की तरह है। तरंग की स्वाभाविक चाहत है, महासागर में फैलने की, बीज की स्वाभाविक चाहत है वृक्ष बनने की। तरंग जब तक महासागर में फैले नहीं, उसकी व्यापकता को मापे नहीं; बीज जब तक फूलों से खिले नहीं, फलों से लदे नहीं, उसकी महक मुक्त आकाश में बिखरे नहीं, तब तक उसकी वृद्धि का कोई अर्थ नहीं। इसी प्रकार गृहस्थ-जीवन जब तक प्रसन्नता एवं खुशहाली की खुशबू से महके नहीं, तब तक वह अपूर्ण है। गृहस्थी में आत्मीयता, प्रेम एवं व्यवस्था एक मंजिल है, उस तक पहुँचे बिना व्यक्ति पीड़ित रहता है, असफलता का दंश उसे सालता रहता है,चाहे वह कितना ही धन कमाले, कितना ही वैभव जुटाले, किन्तु उसे अपने गृहस्थ-जीवन की सफलता एवं सार्थकता की अनुभूति नहीं होती। परिवारों में मतभेद, मन-भेद के कारण तथा समर्पण के अभाव में परिवारजनों के दिलों में एक कंटीली चुभन, बेचैनी भरा दर्द बना रहता है, क्योंकि असंतुलित गृहस्थी का रथ नहीं चल पाता है, भले ही सारथी कितना ही समझदार क्यों न हो। यह सच भी है गृहस्थ परिवार कितने ही पसीनों द्वारा सींचा जाता है। यह एक तपस्थली है जहाँ व्यक्ति स्वेच्छा से तप-त्याग, उत्सर्ग, सेवा, सहिष्णुता आदि धर्माचरण का अवलम्बन लेता है। परिवार दाम्पत्य जीवन से विकसित होता है। परिवार में पुरुष को पितृत्व और नारी को मातृत्व का गौरव प्राप्त होता है। उनकी वात्सल्यपूर्ण निर्भय छाया में संतानें सबल होकर सांसारिक संघर्षों के योग्य बनती हैं इसलिए भारतीय गृहस्थ परिवार हजारों झंझावातों को झेलकर अडिग अविचल खड़े रहते हैं।

डॉ. सत्यनारायण पाण्डेय तथा आर.बी.जोशी ने अपने ग्रन्थ "भारतीय संस्कृति के मूल तत्त्व" में स्पष्ट किया कि प्राचीन भारतीय पारिवारिक जीवन में गृहपति और गृहिणी का महत्त्वपूर्ण स्थान है। परिवार में

माता का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना गया है। डॉ. शिवदत्त शर्मा ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "**वेदकालीन समाज**" में स्पष्ट किया है कि परिवार में माता का स्थान अतिविशिष्ट एवं सर्वोत्तम है।

प्राचीन इतिहास से स्पष्ट होता है कि भारतीय गृहस्थी में जहाँ स्त्री-पुरुष में अभिन्नता पायी जाती थी, पूरी गृहस्थी को कर्तव्य धर्म की मर्यादाओं में बाँधकर उसमें अनुशासन, सेवा, त्याग, सहिष्णुता, समर्पण की भावना कूट-कूट कर भरी जाती थी, जिस पर व्यक्ति का एवं समाज का विकास संभव था, उन दिनों में पारिवारिक वातावरण में सौमनस्य एवं प्रेम था। परिवार का समस्त व्यवहार कर्त्तव्य की भावना पर टिका हुआ था। सभी एक दूसरे के लिए सहर्ष कष्ट सहन करने, त्याग करने में सर्वदा आगे रहते थे। परिवार एक विलक्षण सुख से ओतप्रोत रहता था।

आज के बदलते परिवेश में भौतिकवादी संस्कृति की चकाचौंध में गृहस्थ-जीवन उलझनों में उलझकर टूट रहा है, बिखर रहा है। घर को भण्डार घर बनाने की ललक में आधुनिक साधनों की होड़ में अपने असली घर को भूल रहा है। अनेक छोटे-छोटे कारणों से 'कबीले' 'कुटुम्ब' एवं संयुक्त परिवार विलुप्त हो गये हैं। अब तो इकाई परिवारों में भी दरारें उत्पन्न हो गयी हैं। साथ रहकर भी साथ नहीं होते हैं। एक छत के नीचे रहकर भी अलग-अलग मत एवं मान्यताओं में जी रहे हैं। ऐसे लोग भले ही भौतिक रूप से सुदृढ़ नजर आते हों, लेकिन आन्तरिक रूप से टूटे हुए प्रतीत होते हैं। ऐसे लोग कुण्ठित हो रहे हैं, आन्तरिक घुटन से पीड़ित हैं, लेकिन किसी को अपनी बात कहने का साहस खो चुके हैं। ऐसी स्थिति में परिवार की क्या स्थिति हो सकती है एक प्रश्नचिह्न है?

अर्थोपार्जन की गति ने इतना भ्रमित कर दिया है कि परिवारजनों को अपने कर्त्तव्यों का भी भान नहीं है। वे अपने दायित्वों से मुँह मोड़ रहे हैं। कर्त्तव्य निभाना नहीं चाहते हैं तथा अधिकार को छोड़ना नहीं चाहते हैं। अधिकार प्राप्ति के लिए झगड़ा तक करने को तैयार रहते हैं। सम्पत्तियों के बँटवारे के लिए कई हथकण्डे अपना लेते हैं, लेकिन कर्त्तव्यों के निर्वाह के लिए तुरन्त पल्ले झाड़ लेते हैं। अधिकांश जगह देखने को मिलता है कि बुजुर्ग माता-पिता अलग-अलग पुत्रों के साथ बड़ी ही दयनीय स्थिति में रहते हैं। कई

लोग तो उन्हें न रखने के बहाने ढूँढते हैं तथा यहाँ तक कह देते हैं- "मैं ही आपका बेटा नहीं, मैं ही आपको क्यों रखूँ, मैंने ही ठेका नहीं लिया है।" ये सब बातें सामान्य हो रही हैं। ऐसे परिवार की स्थिति क्या हो सकती है, एक प्रश्नचिह्न है।

पत्नी घर की लक्ष्मी होती है, उसे अर्द्धांगिनी माना जाता है। विवाह के समय वह वचनबद्ध होती है साथ निभाने के लिए, लेकिन पाश्चात्त्य देशों का अनुकरण कर त्याग, समर्पण, सहनशीलता एवं वात्सल्य को छोड़ वह स्वतंत्र एवं स्वच्छन्द वातावरण चाहती है। नारियों में 'इगो' जाग्रत हो रहा है। "मैं भी कूछ हूँ", "मेरी भी हैसियत है-स्टेटस है", "मैं भी कुछ कर सकती हूँ।" आर्थिक स्वतंत्रता की ओर अग्रसर नारी अपनी ममता तक को भूल जाती है, गृहस्थी तो दूर की बात है, विडम्बना यह है कि भारतीय संस्कृति के अनुसार उचित न होते हुए भी इनका धनोपार्जन तो अच्छा लगता है, लेकिन स्वतंत्रता एवं स्वच्छन्दता अप्रिय होती है, जिनसे पति-पत्नी के रास्ते अलग हो जाते हैं। परिणामस्वरूप वर्तमान दौर में तलाक का आंकड़ा बढ़ रहा है। ऐसा लगता है कि आज वैवाहिक जीवन एक 'कान्ट्रेक्ट' बन गया है, जो त्याग के स्थान पर शर्तों पर चलता है तथा संदेह का घेरा साथ चलता है, क्योंकि आपसी विश्वास, आपसी प्रेम, आपसी समझ कमजोर सिद्ध हो रही है।

आचार्यों ने कहा है कि गृहस्थ-जीवन के लिए आवश्यक है कि कन्या एवं वर के चयन के लिए कुल की समानता हो, फिर कन्या एवं वर के 'शील' और स्वभाव की समानता हो। यदि कुल की असमानता होती है तो आचार-व्यवहार, रीति-रिवाज, रहन-सहन, खान-पान आदि में भिन्नता होने से कन्या के लिए कई कठिनाइयाँ उत्पन्न हो जाती हैं। कई बार इनसे भी विवाद उत्पन्न हो जाते हैं। धन के लालच में इकलौती लड़कियों एवं बड़े घरों की लड़की को पसंद करते हैं, फिर उनसे सेवा की उम्मीद लगाते हैं जो संभव नहीं है। आज अनमेल विवाह को बढ़ावा मिल रहा है जिसमें वय, शील, गुण, शिक्षा आदि का विचार नहीं होता। इन दम्पतियों के विचार कैसे हो सकते हैं? भले ही थोड़े समय के लिए समझौता कर लें, लेकिन एक दिन ज्वालामुखी के रूप में विस्फोट होता है और परिवार बिखर जाते हैं। कई जगह पर धार्मिक असमानता पायी जाती है। अलग-अलग मत को मानने वाले होते हैं; विरोध

करने पर धार्मिक स्वतंत्रता पर प्रश्न खड़ा हो जाता है, क्योंकि सभी सती चेलना की तरह नहीं बन सकते हैं।

आज सम्पूर्ण विश्व में गृहस्थ-जीवन में आधिपत्य प्रायः पुरुष को प्राप्त है। फलतः पुरुष के अहंकार ने अपनी आन्तरिक संवेदनशील-भावना को मिटा दिया है। वह गलत होकर भी गलती का अहसास नहीं करता। वह अपने को ही श्रेष्ठ, उच्च एवं योग्य मान बैठता है। उसकी बात न मानने का अर्थ है विरोध, विवाद एवं विवाह-विच्छेद, जिससे परिवार टूट जाते हैं। यदि पुरुष अपना समय परिवार एवं बच्चों में नियमित रूप से देने लगे, उन्हें समझने लगे, उनकी भावनाओं की कद्र करे तो टूटन रुक सकती है।

अधिकांशतः परिवारों का बिखराव महिलाओं द्वारा उत्पन्न की गई परिस्थितियों से होता है क्योंकि 'हाजिर जवाब' की वृत्ति ने धैर्य, सहनशीलता, विवेक को बहुत कमजोर कर दिया है। छोटी-छोटी बातों को तूल दे दिया जाता है। आवेश में वे अपनी मर्यादा चाहे भाषा की हो या जीवन-यापन की, गौण कर देती हैं, वे बड़े बुजुर्गों का लिहाज भी भूल जाती हैं तथा 'जैनेरेशन गेप' कह कर टाल जाती हैं। यही वृत्ति आज के युवाओं की है, जिनसे मुखिया के सम्मान को ठेस पहुँचती है, अन्ततोगत्वा वे अलग हो जाते हैं।

पारिवारिक कलह जो छोटी-छोटी बातों को लेकर होता है, जो रोजमर्रा की आदत बन जाती है जिसे टाला जा सकता है, लेकिन 'अहम' के कारण तकरार होती है, जिसमें परिवार छिन्न-भिन्न हो जाते हैं, कई उदाहरण मौजूद हैं।

शास्त्रों में गृहस्थ-जीवन को सांसारिक दृष्टि से श्रेष्ठ कहा गया है और महान् माना गया है। इसी पर चारों आश्रम (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम) टिके हुए हैं। शास्त्रों में कहा है कि जिस घर में पत्नी का सम्मान हो, जो पत्नी पति की चाहत बनी रहे, जहाँ मनभेद न हो तथा जिस पत्नी में समर्पण हो, वात्सल्यमयी ममता हो, बड़ों के प्रति सम्मान हो, एक-दूसरे के प्रति विश्वास हो, वह परिवार कभी 'टूटन' की कगार तक नहीं पहुँच सकता, क्योंकि जहाँ प्रेम, त्याग, सहयोग, सौहार्द, कर्त्तव्य परायणता होगी वहाँ परिवार सुदृढ़ एवं संगठित होगा।

-१२, रीटा पार्क सोसाइटी, शाही बाग, अहमदाबाद

भोजलिप्सा

डॉ. राजेन्द्रमुनि जी म.सा.

बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित कहानी को पढ़कर अन्त में दिए गए प्रश्नों के उत्तर १० सितम्बर २००६ तक श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-३४२००१ (राज.) के पते पर प्रेषित करें। श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को **श्री महावीरचन्द जी बाफना, जोधपुर** द्वारा अपनी धर्मपत्नी स्व. श्रीमती मोहिनीदेवी जी बाफना की पुण्य-स्मृति में पुरस्कृत किया जा रहा है। **पुरस्कारों की परिवर्तित राशि निम्नानुसार है- प्रथम पुरस्कार-२५० रुपये, द्वितीय पुरस्कार-२०० रुपये, तृतीय पुरस्कार- १५० रुपये तथा १०० रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार। प्रतियोगिता में अब १० वर्ष से २१ वर्ष तक के छात्र-छात्रा भाग ले सकते हैं।**

लंका में विभीषण जी ने हनुमान जी से कहा था- ''हे पवनसुत, सुनो! तुम्हारा रहना तो यहाँ लंका में उसी तरह है, जैसे दाँतों के बीच में बेचारी जीभ रहती है- **सुनहु पवनसुत रहनि हमारी, जिमि दसनन बीच जीभ बिचारी॥''**

जीभ की इस स्थिति को देखकर उस पर कितनी दया आती है। जीभ की परवशता 'बेचारी' शब्द में पूरी तरह आ गई है। पर बात ऐसी नहीं है। जीभ दाँतों से बहुत ऊँची चीज है। जीभ चिरंजीवी है जबकि दाँत अल्पजीवी हैं। जीभ मरते दम तक साथ रहती है, जबकि दाँत मनुष्य के मरने से पहले ही मर जाते हैं और मनुष्य को पोपला बना देते हैं। इतना ही नहीं, बेचारे दाँत तो भोजन चबाने का परिश्रम करते हैं और स्वाद जीभ लेती है। दाँतों की हमारी साधना में कोई महत्त्वपूर्ण भूमिका नहीं है। जीभ चाहे तो हमें स्वर्ग ले जाए और जीभ चाहे तो हमें नरक में गिरा दे। नवकार मंत्र भी हम जीभ से जपते हैं और जीभ से गाली देकर कर्मबंध भी करते हैं।

जीभ बहकती है। कभी बोलते समय बहकती है तो कभी स्वाद के लिए बहकती है। साधक को बस इसी जीभ पर नियंत्रण करना है कि वह बहकने न पाये। स्वाद के लिए जीभ लालायित हुई तो एक बेचारे हलवाई की दुर्गति करा दी।

''आखिर ये भी तो राजकुमार हैं। इनके घर खाने-पीने की क्या कमी

है?" राजा ने मंत्री से कहा- "मंत्रिवर, मेरे जामाता एक बड़े राजा के पुत्र हैं। ये अपने महलों में सब कुछ पाते होंगे। अतः इनको कुछ ऐसी वस्तुएँ मिलनी चाहिए, जिससे ये यह अनुभव करें कि ससुराल में मेरा बहुत सम्मान और स्वागत हुआ।"

मंत्री ने राजा से कहा-"राजन्! एक कहावत तो आपने भी सुनी होगी कि जितना गुड़ डालोगे उतना ही मीठा होगा। लेकिन डालते-डालते इतना गुड़ पड़ जाए कि वस्तु गुड़ हो जाए तो फिर गुड़ से ज्यादा भी क्या मीठा होगा? वस्तु जब वस्तु न रहकर गुड़ ही हो गई तो फिर क्या कहना?"

"राजन्! बढ़िया-से-बढ़िया भोजन की सीमा का अन्त एक राजा के यहाँ न होगा तो किसके यहाँ होगा? जो कुछ हम उन्हें खिलायेंगे, वही सब उनके यहाँ भी है तो फिर हम विशेषता कैसे ला सकते हैं। निर्धन घर का जामाता तो अपने घर रूखी-सूखी खाता है और ससुराल में पूड़ी-हलवा खाता है। पर राजा का जामाता अपने श्वसुर के यहाँ कुछ विशिष्ट कैसे पा सकता है?"

"तो फिर तुम काहे के मंत्री हो?" राजा ने कहा- "कुछ तो विशेष भोज की व्यवस्था करो।"

मंत्री ने कहा- "आपकी आज्ञा के पालन के लिए मैं ऐसा करता हूँ कि हर राज्य और हर नगर से वहाँ के विशिष्ट मिष्ठान्न मँगवाता हूँ। किसी नगर की कोई मिठाई प्रसिद्ध है तो किसी नगर की कोई।"

"ऐसा ही करो।" राजा ने कहा- "कोई मिठाई रह न जाए।"

राज-जामाता भोजन करने बैठे। दास-दासियों की भीड़ खड़ी थी। तरह-तरह की मिठाइयाँ थालों में सजी थीं। इतनी सारी मिठाइयों को देखकर जामाता ने श्वसुर की ओर देखा और बोला- "मिठाइयाँ तो मैं खा नहीं सकता। मेरा पेट तो इन्हें चखने से ही भर जाएगा।"

"मिठाइयों के प्रकार ही इतने हैं तो हम कम कैसे करते?" राजा ने कहा- "मिठाई का कोई प्रकार छोड़ा नहीं गया है। हर नगर से उस नगर की विशेष मिठाई मँगवाई है। कोई ऐसी मिठाई हो तो बताओ जो इनमें न हो।"

जामाता ने थालों पर एक दृष्टि डाली और बोला- "एक मिठाई तो इसमें है ही नहीं। घेवर कहीं दिखाई नहीं दिया।"

"घेवर?" राजा ने मंत्री की ओर देखा- "मंत्री, घेवर किस नगर का प्रसिद्ध है?"

"पृथ्वीनाथ, घेवर तो हमारे नगर में भी बहुत अच्छा बनता है, लेकिन....।"

"लेकिन क्या?" राजा कुछ क्रुद्ध हो उठे- "अभी घेवर मँगा कर दो।"

जामाता ने राजा से कहा-"पूज्य, आप रुष्ट मत होइए। इन दिनों घेवर तो कहीं भी नहीं मिल सकता। यह श्रावण में ही बनता है। इसलिए घेवर की ओर किसी का ध्यान नहीं गया।"

राजा ने कहा- "जो मिष्ठान्न श्रावण में बनता है, वह अब कार्तिक में विशेष रूप से बनवाया जा सकता है। आप नगर के किसी घेवर विशेषज्ञ को बुलवाकर यहीं घेवर बनवाइए।"

मंत्री ने दूसरे दिन एक चतुर हलवाई बुलाया। वह घेवर बनाने बैठा। घेवर बनाते-बनाते हलवाई की जीभ मचल उठी। बार-बार उसका मन होता कि कैसे भी घेवर मिले। लेकिन कोई अवसर हलवाई को नहीं मिला। तभी उसका लड़का आ गया। हलवाई ने घेवर के चार लच्छे अपने लड़के को दे दिये "इन्हें घर ले जा। कोई देखने न पाये।"

लड़का चुपचाप घेवर लेकर घर पहुँचा। उसने माँ को चारों लच्छे सौंप दिए। हलवाई के घर में चार प्राणी थे। स्वयं हलवाई, उसकी पत्नी, उसकी विवाहित लड़की और अविवाहित पुत्र। उन दिनों संयोग से हलवाई की लड़की भी घर पर आई हुई थी।

घेवर को देखकर बच्चे मचल उठे। हलवाई की पत्नी ने सोचा कि चार लच्छे घेवर के हैं और चार ही हम खाने वाले हैं। पति का लच्छा उठाकर रख दूँ और हम तीनों खा लें।

पत्नी, पुत्री और पुत्र-तीनों ने एक-एक लच्छा खा लिया और हलवाई के हिस्से का एक लच्छा उसकी पत्नी ने उठाकर रख दिया। संयोग से थोड़ी ही देर बाद हलवाई का जामाता भी उसके घर पहुँच गया। जामाता तो विशिष्ट अतिथि होता ही है। हलवाई की पत्नी ने पति का हिस्सा जमाई को खिला दिया।

संध्या को हलवाई घर पहुँचा तो उसने घेवर माँगा। पत्नी ने पूरी वस्तुस्थिति पति को समझा दी तो उसे विवश होकर संतोष करना पड़ा। दूसरा कोई चारा ही नहीं था। मन मसोस कर उसने इतना अवश्य कहा- "चोरी भी की और घेवर भी नहीं मिला।"

इतना कह हलवाई भोजन करने बैठा, तभी राजा के सैनिक उसे पकड़ने आ गए। उन्होंने आरोप लगाया कि हलवाई ने घेवर के चार लच्छे चुराये हैं।

आरक्षी सैनिकों ने हलवाई को राजा के सामने उपस्थित किया तो राजा ने कहा- "प्रश्न घेवर के चार लच्छे कम होने का नहीं है, तुम्हारे दुस्साहस का है। तुमने राजा के यहाँ चोरी करने का दुस्साहस किया है। चोरी आखिर चोरी है, वह छदाम की हो या स्वर्ण मुद्रा की। मेरे यहाँ चोरी के लिए प्राणदण्ड दिया जाता है। पर मैं तुम्हें पचास कशाघात का दण्ड देता हूँ।"

हलवाई पर सटासट कोड़े पड़ने लगे। वह तड़प उठा और चीख कर बोला- "अन्नदाता, मुझे मत मारो। चोरी का घेवर जिन्होंने खाया, उनको भी तो दण्ड मिलना चाहिए। मैंने तो घेवर चखा तक नहीं है।"

पूरी बात सुनने-समझने के बाद राजा ने हलवाई की पत्नी, पुत्री और पुत्र-तीनों को बुलवाया। हलवाई का जामाता अपने घर जा चुका था। अतः उसे नहीं बुलाया गया। राजा ने हलवाई की पत्नी से कहा कि पचास कोड़ों में जो बचे हैं, वे तुम तीनों को लगेंगे।

हलवाई की स्त्री ने कहा-

"अन्नदाता, प्रश्न कोड़ों का नहीं न्याय का है। न्याय के नाते हम तो निरपराध हैं। हमें क्या पता था कि घेवर चोरी का है? स्त्री एवं बच्चों का भरण-पोषण करना तो पति की जिम्मेदारी है। क्या कभी ऐसा होता है कि चोरों के परिवार वालों को दण्ड मिलता हो?"

राजा सोचने लगा। तभी हलवाई ने कहा- "पृथ्वीनाथ, असली चोर तो मेरी जीभ है। इसी ने मुझे घेवर चुराने की प्रेरणा दी थी। आप मेरी जीभ को सजा दीजिए।"

राजा को हलवाई की बेबसी पर दया आ गई और सबको छोड़ दिया।

बिना धैर्य के खाने के लोभ को छोड़ा नहीं जा सकता। धैर्यवान तो भूख परीषह को भी सह लेते हैं, पर चोरी नहीं करते। लेकिन स्वाद या भोजलिप्सा

को रोकना तो विवेक पर निर्भर है। विवेकी जन कभी भी जीभ के बहकावे में आकर चोरी नहीं करते। चोरी से कहीं अधिक अच्छा तो माँगना है। माँगना कायरता अवश्य है, पर पाप नहीं।

प्रश्न

१. जीभ की विशेषताएँ बताइये।

२. जामाता को भोजन कराने के लिए राजा ने क्या विशिष्ट आयोजन किया और क्यों?

३. "चोरी भी की और घेवर भी नहीं मिला" हलवाई के इस कथन से हमें क्या शिक्षा मिलती है?

४. "तुम बत्तीस मैं एकली, बसी तुम्हारे मांय। जरा टेढ़ी बात करूँ तो, बत्तीसी गिर जाय।।" यह बात कहाँ तक युक्तिसंगत है?

५. अर्थ बताइये- पवनसुत, छदाम, कशाघात, चिरंजीवी, परवशता।

६. 'जो करे वो भरे' कहावत इस कहानी में चरितार्थ होती है। लिखिये।

७. धैर्य का चोरी के साथ क्या संबंध है?

बाल-स्तम्भ [जून-२००६] का परिणाम

जिनवाणी के जून-२००६ के अंक में बाल-स्तम्भ के अंतर्गत 'कुरुदत्त मुनि' कहानी के प्रश्नों के उत्तर ३२ बालक-बालिकाओं से प्राप्त हुए। प्राप्तांक २० में से दिए गए हैं। इस अंक की प्रतियोगिता के विजेता इस प्रकार हैं-

पुरस्कार एवं राशि	नाम	अंक
प्रथम पुरस्कार-२५०/-	स्वाति जैन-गंगापुर सिटी	२०
द्वितीय पुरस्कार-२००/-	यशवंत गोलेछा-ब्यावर	१९.५
तृतीय पुरस्कार- १५०/-	श्वेता आचलिया-नरडाणा	१८.५
सान्त्वना पुरस्कार- १००/-	हिमांशु सिंघवी-जोधपुर	१८
	कुलदीप जैन-रतकुड़िया	१८
	डिम्पल सालेचा-जबलपुर	१८
	कमलेश कुमार जैन-पादरु	१८
	तनुजा बोरा, लासुर स्टेशन	१७.५

भोजन और अध्यात्म

श्री चंचलमल चोरडिया

शारीरिक पोषण हेतु भोजन की आवश्यकता

जीवन चलाने के लिए हवा और पानी के बाद में सबसे ज्यादा आवश्यकता भोजन की होती है। यदि ये तीनों पर्याप्त मात्रा में मिलें, किन्तु उनका मूल स्वरूप बिगड़ जाए तो भी अनेक प्रकार की समस्याएँ हो सकती हैं। भोजन की विभिन्नताओं के कारण सबसे अधिक प्रायः यह स्वरूप आहार तत्त्व का बिगड़ता है। संतुलित, पौष्टिक एवं सात्त्विक भोजन से शरीर को बाह्य एवं आन्तरिक कार्यों हेतु आवश्यक ऊर्जा और पोषण मिलता है। जिससे रक्त, रस, माँस, मज्जा, अस्थि, वीर्य आदि सप्त धातुओं का निर्माण होता है। शरीर में नवीन कोषों का सृजन होता है। शरीर की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है। शरीर का तापमान संतुलित रहता है। अतः हम जो कुछ खाते हैं अथवा जो शरीर में खाने के माध्यम से पहुँचता हैं उस पर ही हमारा स्वास्थ्य निर्भर करता है।

भोजन का जीवन पर प्रभाव

भोजन जीवन का आधार है। आधार हमेशा मजबूत होना चाहिए, मजबूरी, लापरवाही,अज्ञान तथा अविवेकपूर्ण आचरण के कारण इसमें विकृति नहीं आनी चाहिए। यह आवश्यक भी है और हमारे लिए चेतावनी भी है।

खाया हुआ भोजन तीन भागों में विभक्त हो जाता है। स्थूल भाग मल बनता है, मध्यम अंश से शरीर के अवयवों का निर्माण होता है और अन्न के भावांश से मन बनता है। इसी कारण होटल के खाने से पेट तो भर सकता है, परन्तु मन नहीं। पेट भोजन से भर सकता है, परन्तु मन तो भोजन में होने वाले भावों से ही भरता है।

तामसिक भोजन करने वाला तामसिक वृत्तियों वाला होता है। तामसिक व्यक्ति शरीर के लिए जीता है। राजसिक भोजन से मन और बुद्धि चंचल होती है। राजसिक प्रवृत्ति वाले अत्यधिक महात्वाकांक्षी होते हैं। अतः उन्हें उत्तेजना पैदा करने वाला भोजन अच्छा लगता है। सात्त्विक भोजन ही संतुलित होने से सर्वश्रेष्ठ होता है। प्रत्येक व्यक्ति के भोजन का उद्देश्य अलग-अलग होता है।

पशु खाता है केवल पेट भरने के लिए,
मूर्ख खाता है केवल स्वाद के लिए।

बुद्धिमान खाता है आरोग्य और शक्ति के लिए,
सन्त खाता है केवल साधना के लिए॥

भोजन का हमारे आचार-विचार, चिन्तन-व्यवहार, मनन-स्वभाव आदि से भी गहरा संबंध होता है। इसीलिए तो हमारे यहाँ कहावत है- **''जैसा खाए अन्न, वैसा होवे मन''** आहार के परमाणु विचारों को प्रभावित करते हैं। दूषित आहार से विचार दूषित होंगे और शुद्ध आहार से शुद्ध।

शरीर का अर्थशास्त्र

शरीर का अपना अर्थशास्त्र होता है। वह अपनी बुनियादी आवश्यकताएँ पहले पूरी करता है। उसके पश्चात् गैर बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। जैसे गरीब व्यक्ति को सबसे पहले भोजन की आवश्यकता होती है। येन-केन प्रकारेण वह अपनी भूख शान्त करने का प्रयास करेगा। उसके पश्चात् ही कपड़ों की, रहने की, मनोरंजन, स्वादिष्ट भोजन आदि की तरफ उसका ध्यान जायेगा। शरीर की प्राथमिक आवश्यकताएँ पूर्ण होने के पश्चात् ही मन की जरूरतें प्रारम्भ होती हैं। जब मन की आवश्यकताएँ नहीं होती अथवा नियन्त्रित होती हैं, तब ही साधना, उपासना, आराधना आदि के द्वारा आत्मा की आवश्यकता की तरफ प्रायः जन साधारण का ध्यान जाता है। व्यक्ति ध्यान और समाधि आदि पर विचार करता है।

आत्मोत्थान ही मानव जीवन का लक्ष्य

शरीर, मन और आत्मा तीन स्तर हैं। मन का आधार भी तो इस जीवन में शरीर होता है। अतः जब शरीर की मूलभूत आवश्यकताएँ पूरी हो जाती हैं और ऊर्जा बचती है तो फिर मन को मिलती है और जब मन की भी ऊर्जा की जरूरत न हो और ऊर्जा बचे तो आत्मा को मिलती है। आत्मा को ऊर्जा वे ही साधक दे पाते हैं, जिनके शरीर और मन की आवश्यकताएँ सीमित होती है और जो अपनी प्राण ऊर्जा का अपव्यय अथवा दुरुपयोग नहीं करते। ऐसे संयमित, नियमित, परिमित, अनुशासित जीवन जीने वालों में ही मानवीय गुणों का विकास होता है। सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन और सम्यक् आचरण द्वारा मानव-जीवन के सही लक्ष्य आत्मोत्थान को प्राप्त करने में सफल होते हैं।

भोजन के संबंध में आधुनिक आहार विशेषज्ञों का सोच कितना सही?

आज विज्ञान का युग है। अतः आहार के संबंध में भी जब तक कोई

सिद्धान्त आधुनिक स्वास्थ्य वैज्ञानिकों, चिकित्सकों द्वारा स्पष्ट रूप से मान्य नहीं कर दिया जाता, तब तक अधिकांश जन-मानस एवं स्वास्थ्य मंत्रालय उस बात को जानने, मानने, सुनने, समझने, स्वीकारने अथवा अपनाने में संकोच करता है।

अधिकांश आहार विशेषज्ञों ने शरीर को ताकतवर, शक्तिशाली बनाने हेतु आवश्यक रासायनिक तत्त्व और ऊर्जा को जैसे- प्रोटीन, विटामिन, कार्बोज, लवण, जल, वसा और केलोरीज की मात्रा को तो अत्यधिक महत्त्व दिया। किसी खाद्य पदार्थ में क्या-क्या तत्त्व कितनी-कितनी मात्रा में होते हैं, उनकी जानकारी से जन-साधारण को अवगत कराया। परन्तु भोजन के अवयव कितने सात्त्विक, अहिंसक, शुद्ध और पवित्र होने चाहिये, कितने सुपाच्य, दुष्पाच्य अथवा अपाच्य हैं, उस संबंध में अपेक्षित प्राथमिकता नहीं दी। परिणाम स्वरूप पौष्टिकता के नाम पर आज मानव भक्ष्य-अभक्ष्य, खाद्य-अखाद्य, अहिंसा-हिंसा, न्याय-अन्याय, वर्जित-अवर्जित आदि का विवेक खोता जा रहा है।

अधिकांश आहार गोष्ठियों में भोजन के पौष्टिक तत्त्वों एवं केलोरीज के बारे में चर्चा और चिन्तन प्रायः सीमित होते हैं। भोजन से जीवन क्यों, कितना और कैसे प्रभावित होता है, प्रायः चर्चित नहीं होता।

भोजन कब, क्यों, कैसा और कितना पर चिन्तन आवश्यक

भोजन कब, क्यों, कितना, कैसा और कहाँ करना चाहिए और कब क्यों, कैसा और कहाँ नहीं करना चाहिये? भोजन कहाँ और कैसे वातावरण और बर्तनों में बनाना चाहिये और खिलाना चाहिये? दो भोजनों के बीच में कितने समय का कम से कम अन्तराल होना चाहिये? बार-बार क्यों नहीं खाना चाहिए? प्रकृति के अनुरूप भोजन का सर्वश्रेष्ठ अनुकूल समय कौनसा है? रात्रि भोजन क्यों नहीं करना चाहिए? भोजन में क्या खाना चाहिए और क्या नहीं खाना चाहिए? भोजन बनाने वालों की भावना और भोजन प्राप्ति के स्रोत कैसे होने चाहिये? भोजन करते समय आसपास का वातावरण, हमारी भूख, आसन, विचार, भावना, मानसिकता, चिन्तन कैसा होना चाहिए? भोजन मौसम और स्वास्थ्य के अनुकूल है अथवा नहीं? जिस उद्देश्य से भोजन किया जा रहा है, उसका कितना प्रतिशत लाभ मिल रहा है? अगर नहीं मिल रहा है,

तो क्यों नहीं मिल रहा है?

भोजन में भावों का महत्त्व

भोजन कितना ही संतुलित, पौष्टिक, सुपाच्य, स्वास्थ्यवर्द्धक क्यों न हो, परन्तु यदि खिलाने वालों का व्यवहार अच्छा न हो, उपेक्षापूर्ण हो, वाणी में व्यंग्य हों तो ऐसा भोजन भी अपेक्षित लाभ नहीं पहुँचा सकता।

भोजन में प्राथमिकता क्या हो?

आहार में पौष्टिक तत्त्वों का निश्चय ही बहुत महत्त्व होता है। अपौष्टिक आहार से भी स्वास्थ्य को हानि होती है, परन्तु आधुनिक विज्ञान की बातें करने वाले चिकित्सक जितनी पौष्टिक तत्त्वों की बातें करते हैं उतनी उससे भी आवश्यक अस्वच्छ वातावरण में बने, मिलावटी डिब्बे बंद या तामसिक खाद्य पदार्थों आदि को न खाने तथा रात्रि भोजन न करने का परामर्श क्यों नहीं देते?

शरीर से आत्मा का महत्त्व ज्यादा होता है। शरीर से मन और आत्मा के विकार ज्यादा हानिकारक एवं खतरनाक होते हैं। अतः जो भोजन शरीर को पुष्ट रखने के बावजूद मन आत्मा के विकारों को बढ़ाता है, वह भोजन उपयुक्त नहीं हो सकता। स्वच्छ कपड़े पहनकर आभूषण पहनने से शरीर की शोभा बढ़ती है। जिस प्रकार बिना कपड़े और आभूषण से शरीर को सजाने वालों पर दुनिया हँसती हैं। यद्यपि आभूषणों का मूल्य तो कपड़ों (पोशाक) से ज्यादा ही होता है। ठीक उसी प्रकार पौष्टिकता और स्वाद के नाम पर मन और आत्मा को विकारी और कमजोर बनाने वाला भोजन करना अदूरदर्शिता पूर्ण आचरण ही होता है। जिस प्रकार विष की चंद बूँदे टनों दूध को अपेय बना देती हैं। एक चिनगारी सारे घास के ढेर को जलाने की क्षमता रखती है। एक साँप के काटने से व्यक्ति मर सकता है। मृत्यु के लिए सौ सर्पों के काटने की आवश्यकता नहीं होती। ठीक उसी प्रकार भोजन में उपर्युक्त तथ्यों में से किसी भी तथ्य की उपेक्षा, भोजन से होने वाले लाभ से वंचित रख सकती है।

भोजन हेतु प्रकृति की देन

जिस वातावरण और स्थान पर हम रहते हैं, हमारे लिये आवश्यक सभी खाद्य पदार्थों का उत्पादन प्रकृति उस क्षेत्र में करती है। सभी जीव जन्तु वह खाते हैं, जो उनके आसपास उपलब्ध होता है। वे कोई खाद्य पदार्थों का अन्य

स्थानों से आयात नहीं करते। अतः जिस मौसम में जो फल, सब्जियाँ और अन्य खाद्य पदार्थ सहज और सरलता से भरपूर मात्रा में उपलब्ध हों, वे सारे पदार्थ प्रायः स्वास्थ्य के अनुकूल होते हैं। प्रकृति के नियम और कानून गरीब और अमीर सबके लिये समान होते हैं। अतः महंगे, बेमौसमी, आयातित खाद्यान्न का सेवन स्वास्थ्य के लिये सदैव उपयोगी हो, पूर्णतः मिथ्याधारणा है।

तनावमुक्त होकर भोजन करना अतिआवश्यक

जो भोजन सहज रूप से उपलब्ध होता है, उसे शांत भाव से ग्रहण करना चाहिये। भोजन में पौष्टिक तत्त्वों एवं केलोरी की अधिक मात्रा, जितनी ऊर्जा नहीं देती, उससे ज्यादा मानसिक तनाव, भय और चिंता के कारण उसका अपव्यय हो जाता है, जो घाटे का सौदा होता है। अधिकांश व्यक्तियों को सावधानी रखते हुए भी वही भोजन लेना पड़ता है, जो घर में बनता है। घर में प्रत्येक परिजन के आवश्यकतानुसार प्रायः भोजन नहीं बनता। अतः भोजन करते समय भोजन के अवयवों के बारे में व्यर्थ चिन्तन नहीं करना चाहिये, जिससे व्यर्थ तनाव और चिंता होती है। जो भोजन में उपलब्ध पौष्टिक तत्त्वों की कमी से ज्यादा हानिकारक होती है। अतः उपलब्ध भोजन को शांत भाव से ग्रहण करना अधिक लाभप्रद होता है।

कहने का आशय यही है कि जीवन के लिए भोजन हो, न कि भोजन के लिए जीवन। भोजन करते समय निम्न बातों का विवेक आवश्यक हैं-

१. प्रभु को स्मरण कर भोजन करना

२. भोजन को भगवान के प्रसाद की भाँति ग्रहण करना।

३ दीन-दुःखी अथवा अतिथि को भोजन करवा कर खाना।

४. भूख से कुछ कम खाना।

५. बार-बार नहीं खाना।

६. जो न पचे उसे कभी नहीं खाना।

७. लेटे-लेटे अथवा चलते-फिरते नहीं खाना।

८. मद्य-माँस एवं दुर्व्यसनों का सेवन नहीं करना।

-चोरडिया भवन, जालोरी गेट के बाहर, जोधपुर(राज.)

अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ एवं संघ की सहयोगी संस्थाओं की कार्यकारिणी व साधारण सभा का आयोजन

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ एवं संघ की सहयोगी संस्थाओं की कार्यकारिणी व वार्षिक साधारण सभा शनिवार २३ सितम्बर तथा रविवार २४ सितम्बर २००६ को पीपाड़ शहर (जिला-जोधपुर) में रखी गई हैं।

पीपाड़ शहर में शान्त-दान्त-गंभीर, प्रबल पुरुषार्थी, परमश्रद्धेय उपाध्यायप्रवर पं. रत्न श्री मानचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा ५ तथा शान्त स्वभावी तपस्विनी महासती श्री शांतिकंवर जी म.सा. आदि ठाणा ४ के दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण का भी लाभ प्राप्त होगा।

कार्यकारिणी एवं साधारण सभा के सदस्यों से विनम्र अनुरोध है कि संघहित में आप बैठक में कोई सुझाव रखना चाहें तो अपने सुझाव लिखित में संघ के प्रधान कार्यालय को बैठक के १५ दिन पूर्व तक भेजने की कृपा करें। संघहित के उपयोगी सुझावों पर यथोचित विचार व निर्णय करने का हमारा प्रयास रहेगा। संघ सदस्यों को साधारण सभा में भाग लेने की आप अपने क्षेत्र में सूचना करें।

-नवरतन डागा, महामंत्री

अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ एवं संघ की सहयोगी संस्थाओं के अध्यक्षों का मनोनयन/चुनाव

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ एवं संघ की सहयोगी संस्थाओं की कार्यकारिणी व वार्षिक साधारण सभा की बैठके पीपाड़ शहर में २३-२४ सितम्बर २००६ को होंगी। वार्षिक साधारण सभा में आगामी तीन वर्ष के कार्यकाल के लिए संघाध्यक्ष/मण्डल अध्यक्ष/युवक परिषद् अध्यक्ष व श्राविका मण्डल अध्यक्ष का मनोनयन/चुनाव किया जाना प्रस्तावित है। उपर्युक्त पदों के लिये नाम पर चिन्तन करने हेतु संघ संरक्षक मण्डल की बैठके दिनांक २२ सितम्बर २००६ को पीपाड़शहर (जिला-जोधपुर) में होगी।

आप इस बारे में कोई भी नाम/सुझाव देना चाहें तो संघ-संरक्षक मण्डल की बेठक के पूर्व दिनांक १० सितम्बर २००६ तक माननीय श्री मोफतराज जी मुणोत, मुणोत विला, वेस्ट कम्पाउण्ड लेन, ६३-के, भूला भाई देसाई रोड़, मुम्बई-४०००२६ (महा.) अथवा संघ के प्रधान कार्यालय अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-३४२००१ (राज.) के पते पर भिजवाने का कष्ट करें।

-नवरतन डागा, महामंत्री

मधुर गायक, वरिष्ठ स्वाध्यायी श्री माणकचन्द जी गादिया, चालीसगाँव

ओजस्वी वक्ता, मधुर गायक, विनोदप्रिय, वरिष्ठ स्वाध्यायी श्री माणकचन्द जी गादिया का जन्म २३ जुलाई १९४० को नासिक जिले के छोटे से ग्राम 'वजलीभोई' में श्री शिवलाल जी गादिया की धर्मपत्नी श्रीमती चाँदाबाई की कुक्षि से हुआ। मात्र ९ वर्ष ६ माह की अल्पायु में ही आपके पिता का साया उठ गया। आपने श्री महावीर जैन विद्यालय, लासलगाँव में रहकर अध्ययन किया। यहाँ आपने मैट्रिक कक्षा उत्तीर्ण की, साथ ही साथ 'जैन सिद्धान्त विशारद' पाथर्डी बोर्ड से तथा चार कक्षाएँ रतलाम बोर्ड से उत्तीर्ण की। आपने चालीसगाँव जिले के छोटे से ग्राम वडाला-वडाली में अपना व्यवसाय प्रारम्भ किया।

सन् १९७९ ई. में पूज्य आचार्यप्रवर श्री १००८ श्री हस्तीमल जी म.सा. के जलगाँव चातुर्मास में आपने स्वाध्यायी शिविर में भाग लिया। यहाँ मधुर गायन तथा वक्तृत्व कला को देखते हुए आपको पर्युषण पर्व पर संत-सतियों से रहित क्षेत्रों में सेवा देने हेतु सर्वप्रथम वणी ग्राम भेजा गया। आपकी योग्यता व रुचि को देखते हुए आपका स्वाध्याय संघ के प्रचारक के रूप में चयन हुआ। सन् १९८२ में श्री लालचन्द लक्खीचन्द द्वारा संस्थापित श्री महावीर जैन पाठशाला योजना के अन्तर्गत जलगाँव के आस-पास के क्षेत्रों में भ्रमण कर लगभग ४१ क्षेत्रों में बच्चों को आध्यात्मिक और धार्मिक संस्कार देने हेतु धार्मिक पाठशालाएँ प्रारम्भ की। सन् १९८५ से १९९६ तक जलगाँव में *कानजी-शिवजी जैन बोर्डिंग में सुपरिटेन्डेन्ट का कार्य किया।*

सन् १९८० में आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के जलगाँव चातुर्मास में श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के पूर्व अध्यक्ष श्री रतनलाल जी बाफना की प्रेरणा एवं सहयोग से स्वाध्याय-सेवा तथा जैन धर्म का मौलिक इतिहास के प्रचार-प्रसार तथा आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड के प्रचार-प्रसार कार्य में पूर्ण समर्पण एवं निष्ठा के साथ सेवा देते हुए अनेक स्थानों पर परीक्षा केन्द्र

स्थापित किये।

सामायिक स्वाध्याय करते हुए आपने दशवैकालिक, अन्तगड सूत्र, सुखविपाक सूत्र, आचारांग सूत्र का वाचन तथा २५ बोल आदि के थोकड़ों का अभ्यास किया। गत २७ वर्षों में आप वणी, मावली जं., रत्नागिरी, बुलढाणा,शिवपुर,कजगाँव,नागद,बाछली, अम्बाजोगाई, जबलपुर, इच्छापुर, आलेगाँव, श्री पेरम्बुर आदि क्षेत्रों में पर्वाधिराज पर्युषण पर अपनी सेवाओं से जिनवाणी की प्रभावना कर चुके हैं। आपके साथ ही आपकी धर्मपत्नी श्रीमती प्रमिला जी गादिया भी स्वाध्यायी के रूप में अपनी सेवाएँ दे रही हैं।

चालीसगाँव से ही दैनिक समाचार पत्र 'ग्रामस्थ' के सह-सम्पादक के रूप में आपने अपनी सेवाएँ प्रदान की है। सरकार ने आपको 'आनररी मजिस्ट्रेट' (विशेष कार्यकारी दण्डाधिकारी) के पद से अलंकृत किया है।

फूल से सीखें आदर्श जीवन

श्री जशकरण जी डागा

कभी चिन्तन किया कि फूल क्यों खिलता है? क्यों सुगंध देता है और क्यों सबको प्रिय है?

वह खिलता है, कारण उसके अन्तरंग में कोई मैल नहीं, साफ-स्वच्छ होता है। वह सुगंध देता है, कारण उसके अंतर में मकरंद होता है।

वह सबको प्रिय है, कारण वह सबको प्रमुदित करता है। अपने सहज स्वभाव से बच्चे, युवा, वृद्ध सभी को प्रसन्न करता है। उसे भगवान, इन्सान, हैवान और शव पर भी चढ़ाते हैं, पर वह सदा समदर्शी रहता है।

आदर्श उत्तम जीवन बनाने हेतु हम भी फूल से उपर्युक्त तीन गुण ग्रहण करें। अंतर मन को विषय-कषाय रूपी गदंगी को हटा, स्वच्छ व निर्मल बनायें। सद्गुण रूपी मकरंद से सबको सुवासित करें और सुख-दुःख सभी दशाओं में समभाव रख, समदर्शी हो सभी के प्रिय बनें। जीवन को 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' से सुशोभित कर सार्थक करें।

-डागा सदन, संघपुरा, टोंक (राज.)

कृति की २ प्रतियाँ अपेक्षित हैं

नूतन साहित्य

डॉ. धर्मचन्द जैन

श्री समवायाङ्गसूत्रम्-(आचार्य श्री अभयदेवसूरि विरचित-वृत्तिविभूषितम्) सम्पादक-संशोधक-मुनि श्री जम्बूविजयजी म.सा. प्रकाशक-(१) श्री सिद्धि-भुवन मनोहर जैन ट्रस्ट, अहमदाबाद, द्वारा जितेन्द्र मणीलाल संघवी, ए-३, चन्दनबाला अपार्टमेन्ट, नव विकास गृह रोड़, अशोक नगर, पालड़ी, अहमदाबाद-३८०००७, दूरभाष ०७९-२६६४३०९८(२)श्री जैन आत्मानन्द सभा, खारगेट, भावनगर, (गुजरात) पृष्ठ ४६+२०+३१०+१०५+२५(कुल ५०६ पृष्ठ) बड़ा आकार, मूल्य ४५० रुपये, सन् २००५

मुनि श्री जम्बूविजयजी जैन संत-समुदाय में आगम एवं उनके व्याख्या-साहित्य के प्रकाण्ड मनीषी विद्वान् हैं। आप सरलस्वभावी हैं, किन्तु प्राकृत एवं संस्कृत के गहन अभ्यासी एवं शास्त्रीयज्ञान के मर्मज्ञ महापुरुष हैं। आपके द्वारा सम्पादित आगम पहले महावीर जैन विद्यालय, मुम्बई से प्रकाशित हुए हैं। अब आप अभयदेवसूरि की वृत्तियुक्त आगमों के सम्पादन में लगे हैं। पहले अभयदेवसूरि की वृत्ति के साथ स्थानांग सूत्र का तीन भागों में प्रकाशन हो चुका है। अब उसी शृंखला में समवायांग सूत्र का भी अभयदेवसूरि विरचित वृत्तिसहित प्रकाशन हुआ है। वृद्धावस्था में भी आप समर्पितभाव से कार्य में संलग्न हैं।

समवायाङ्ग सूत्र के सवृत्ति संस्करण को तैयार करने में आपने ताड़पत्र एवं कागज पर लिखित पाण्डुलिपियों का आलम्बन लिया है तथा कई महत्त्वपूर्ण संशोधन किए हैं। यथावश्यक पाद-टिप्पणों से मुनिश्री के सम्पादन कौशल का अनुमान होता है। पाठ चयन में आपने अपने विवेक का उपयोग किया है।

समवायाङ्ग सूत्र का यह संस्करण अपने आप में विशिष्ट है और विद्वानों के लिए तथा शोधार्थियों के लिए उपयोगी है। यह अनेक परिशिष्टों से अलंकृत है तथा 'अर्द्धमागधी आगम साहित्य : एक विमर्श' शीर्षक से प्रो. सागरमल जैन का ४६ पृष्ठों का लेख ग्रन्थ के प्रारम्भ में दिया गया है। समवायाङ्ग सूत्र के इस सवृत्ति संस्करण का विद्वज्जगत् में अवश्य ही स्वागत होगा।

***अर्चना की दीपशिखा*-महासती उमरावकुंवर 'अर्चना' *प्रकाशक*-मुनि श्री हजारीमल स्मृति प्रकाशन, पीपलिया बाजार, ब्यावर (राज.), दूरभाष ०१४६२-२५००८७, पृष्ठ ८+२१६ मूल्य ५० रुपये, सन् २००६**

महासती उमरावकुँवर जी 'अर्चना' के प्रवचन रोचक, हृदयस्पर्शी एवं दिशाबोधक होते हैं। आपके प्रवचनों की सद्यः प्रकाशित पुस्तक 'अर्चना की दीपशिखा' में २१ प्रवचन उपलब्ध हैं। प्रवचनों के प्रमुख विषय हैं- गुरु की महिमा अनन्त, स्व का स्व पर शासन, श्रम से विश्राम की ओर, श्रेष्ठपद की सीढ़ी सुकर्म, अलौकिक गुण- नम्रता, चाहे जिसे भजो, पर अभिमान तजो, आत्मविजय के तीन सूत्र आदि। प्रवचनों में सरसता, सम्प्रेषणता एवं ससारता महासतीवर्या के प्रवचनों की विशेषता है।

***कर्म का मर्म(The Secret of Karma)*-महासती डॉ. हेमप्रभा 'हिमांशु' *प्रकाशक*-मुनि श्री हजारीमल स्मृति प्रकाशन, पीपलिया बाजार, ब्यावर (राज.), दूरभाष ०१४६२-२५००८७, पृष्ठ १५६, मूल्य ३० रुपये सन् २००६**

कर्म-सिद्धान्त जैन धर्म-दर्शन का प्रमुख सिद्धान्त है। साध्वी डॉ. हेमप्रभा जी 'हिमांशु' ने इस पुस्तक में गौतमस्वामी एवं तीर्थंकर महावीर के संवाद के माध्यम से शुभाशुभ कर्मों के फलों को ६७ प्रश्नोत्तरों के रूप में प्रस्तुत किया है। कर्म-सिद्धान्त से सम्बद्ध प्रसिद्ध १२ कहानियाँ देकर अन्त में आगम एवं जैन ग्रन्थों से संकलित ९५ सूक्तियाँ/वचन दिए हैं। हिन्दी एवं अंग्रेजी दोनों भाषाओं में सम्पूर्ण सामग्री प्रस्तुत होने से यह पुस्तक हिन्दी एवं अंग्रेजी पाठकों के लिए उपयोगी हो गई है।

Universal Message of Lord Mahavira- *Dulichand Jain,* ***Publisher-*** *Parshwanath Vidyapeeth, ITI Road, Karaundi, Varanasi-221005, Ph. 0542-2575521,* ***Pages-*** *8+112,* ***Price-*** *250/-, First Edition 2005*

The preachings or messages of Lord Mahavira are relevant today for the solution of the several problems of mankind. Shri Dulichand jain has produced this book for all human beings to understand the messages of Lord Mahavira and their application in life. This book is a collection of his various 6 articles or papers and 28 notes, reviews previously published in different Journals, Magazines and esteemed Newspapers like 'The Hindu', 'The Indian Express' etc. The book is useful for the readers to understand the views of Jainism and of Lord Mahavira.

समाचार-संकलन

तपस्वी श्री प्रकाशमुनि जी म.सा. का पीपाड़ में देवलोक गमन

आगमज्ञ, प्रवचन-प्रभाकर, शीलव्रत के प्रबल प्रेरक परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य १००८ श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के आज्ञानुवर्ती सन्तरत्न तपस्वी श्री प्रकाशमुनि जी म.सा. का पीपाड़ नगर में श्रावणशुक्ला १० संवत् २०६३ (तदनुसार ४ अगस्त २००६) को रात्रि में १२.३० बजे समाधिभावों में स्वर्गगमन हो गया। आप शान्त-दान्त-गंभीर, आत्मार्थी परमश्रद्धेय उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. के सान्निध्य में चातुर्मासार्थ सुखशान्तिपूर्वक विराज रहे थे।

श्रावण शुक्ला दशमी ४ अगस्त २००६ की शाम आपने मौन उपवास के प्रत्याख्यान कर लिए थे। अचानक रात्रि में उल्टी एवं दस्त की शिकायत हुई और आप समाधिभावों में प्रत्याख्यानों के साथ नश्वर देह को छोड़कर रात्रि में १२.३० बजे देवलोक गमन कर गए। मुनिश्री के स्वर्गगमन के समाचार दूरभाष के माध्यम से विभिन्न स्थानों पर तुरन्त किए गए। जोधपुर से प्रकाशित राजस्थान पत्रिका एवं दैनिक भास्कर में भी विज्ञप्ति के रूप में समाचार दिए गए। जोधपुर के संघ कार्यालय की सूचना-प्रसारण में महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। दूर-दूर के ग्राम-नगरों से भी लोग पीपाड़ पहुँचने लगे। दिन में दो बजे बैकुण्ठी में पार्थिव देह को जब अन्तिम संस्कार के लिए ले जाया गया तब अनेक ग्राम-नगरों के लगभग २५०० श्रद्धालुजन जय-जयकार करते हुए साथ चल रहे थे। तपस्वी संत-रत्न की पार्थिव देह को मुखाग्नि अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के अध्यक्ष श्री कैलाशचन्द जी हीरावत एवं मुनिवर्य के सांसारिक सुपुत्र श्री लाभमल जी भण्डारी ने दी। अन्तिम यात्रा में जोधपुर, जयपुर, ब्यावर, अजमेर, किशनगढ़, जावला, नागौर, मेड़ता, गोटन, भोपालगढ़, बिलाड़ा, बालोतरा, आगोलाई, निमाज, खवासपुरा, आसोप, धनेरी, बावड़ी, थाँवला, रणसीगाँव आदि ग्राम नगरों के श्रद्धालु उपस्थित थे तथा मुनिश्री के संयमनिष्ठ तपस्वी जीवन का मन ही मन गुणगान कर रहे थे। उनके सांसारिक भ्राता श्री मख्तूरमल जी एवं श्री मगनमल जी तथा अनेक परिजन भी इस समय उपस्थित थे। संघ-संरक्षक मण्डल के संयोजक श्री मोफतराज जी मुणोत भी मुम्बई से आ गए थे।

तपस्वी श्री प्रकाशमुनि जी म.सा. का जन्म जोधपुर में माघ शुक्ला १२-

१३, विक्रम संवत् १९९१ दिनांक १५ फरवरी १९३५ को वीरपिता सुश्रावक श्री पारसमल जी भण्डारी की धर्मसहायिका धर्मपत्नी वीरमाता श्रीमती मानकँवर जी की रत्नकुक्षि से हुआ। धर्मपत्नी, पुत्र-पौत्र आदि से भरे-पूरे परिवार को छोड़कर आपने ४५ वर्ष की अवस्था में अध्यात्मयोगी युगमनीषी आचार्यप्रवर पूज्य श्री १००८ श्री हस्तीमल जी म.सा. के मुखारविन्द से माघ शुक्ला पंचमी विक्रम संवत् २०३७ दिनांक ९ फरवरी १९८१ को बैंगलोर में संयम-जीवन की दीक्षा ग्रहण की। २६ वर्षों से अधिक अवधि तक आपने एकनिष्ठ भाव से शरीर को तपस्या का साधन बनाया तथा निरतिचार रूप से संयम का पालन किया। आपने सेवा, स्वाध्याय एवं तप को अपने जीवन का लक्ष्य बनाया। आप बेला, तेला, अठाई आदि विविध तप करते रहते थे। अभी दूज, पंचमी, अष्टमी, एकादशी, चतुर्दशी इन पाँचों पर्व तिथियों को तथा प्रत्येक दशमी को उपवास कर रहे थे। दीक्षा के पूर्व गृहस्थावस्था में भी आप तप करते रहते थे। एक मासखमण तप आपने गृहस्थ जीवन में तथा दूसरा मासखमण दीक्षा अंगीकार करने के पश्चात् संवत् २०४१ के अहमदाबाद चातुर्मास में सम्पन्न किया। एकान्तर उपवास के दो वर्षीतप किये तथा बेले-बेले उपवास करके भी आप विहार के लिए सदैव सन्नद्ध रहते थे। एकान्तर उपवास एवं बेला भी आप करते रहे हैं। आपसे यदि कोई निवेदन करता- "महाराज! अभी अधिक उम्र हो गई, तपस्या कम करें।" आप श्री फरमाते- "यह शरीर किस काम आएगा?" विगत पाँच वर्षों से आप मात्र दही-रोटी का सेवन कर रहे थे, वह भी दिन में एक बार। तपस्या का पारणक हो तब भी आपका यही क्रम चलता था।

सेवा का आपमें विशिष्ट गुण था। अध्यात्मयोगी आचार्यप्रवर पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. की सेवा में तो आप तत्पर रहे ही, आपने श्रद्धेय श्री जयन्तीमुनि जी म.सा., श्री शुभमुनि जी म.सा. एवं दयामुनि जी म.सा. की सेवा का भी पूरा लाभ लिया। तपस्या होने पर भी आप स्वयं का कार्य स्वयं तो सम्पन्न करते ही थे, सहवर्ती साधुओं की सेवा में भी पानी आदि लाने में सदैव तत्पर रहते थे। आप स्पष्ट वक्ता होने के साथ संघ एवं संघनायक के प्रति पूर्ण समर्पित थे।

वि. संवत् २०३८ से संवत् २०६२ तक आपने क्रमशः बल्लारी, जोधपुर, जयपुर, अहमदाबाद, पाली, विजयनगर, जयपुर, दिल्ली, ब्यावर, पाली, जोधपुर, बालोतरा, भोपालगढ़, कंवलियास, विजयनगर, अजमेर, पीपाड़सिटी, मदनगंज, नागौर, पीपाड़, पालासनी, जोधपुर, जयपुर एवं बालोतरा में आचार्यप्रवर, उपाध्यायप्रवर आदि महापुरुषों के सान्निध्य में चातुर्मास किए।

दिनांक ६ अगस्त को बंगारपेट, पीपाड़, जोधपुर आदि विभिन्न स्थानों पर गुणगान सभा का आयोजन कर श्रद्धांजलि अर्पित की गई।

आचार्यप्रवर का बंगारपेट में चातुर्मासार्थ सादगीपूर्ण मंगल-प्रवेश

आगमज्ञ, प्रवचन-प्रभाकर, शीलव्रत के प्रबल प्रेरक, समाज-सुधार हेतु वैचारिक क्रान्ति के पथ-दर्शक, रत्नसंघ के अष्टम पट्टधर परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री १००८ श्री हीराचन्द्र जी म.सा., महान् अध्यवसायी सेवामूर्ति श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनि जी म.सा. आदि ठाणा ८ का बंगारपेट स्थित स्थानक भवन में चातुर्मासार्थ मंगलमय पदार्पण ४ जुलाई २००६ को अपराह्न २ बजे बिना किसी आडम्बर एवं पूर्व सूचना के सादगी के साथ हुआ। दोपहर में चिलचिलाती धूप का वातावरण, ऐसे समय प्रवेश की भावना, वह भी निर्णय १२ बजे, सभी आश्चर्य चकित थे जब पूज्य श्री के चरण दालमिल से बाहर सड़क की तरफ बढ़े। अचानक धूप नदारद, चारों ओर उस क्षेत्र में शीतल छाया का सुखद वातावरण बन गया। प्रकृति भी मानो आचार्यप्रवर के निर्णय का समर्थन कर रही थी। पूज्य प्रवर १२.१५ बजे विहार कर धीमे-धीमे चरण बढ़ाते हुए संतवृन्द के साथ जब आगे बढ़े तो श्रद्धालु भक्त उमड़ पड़े। लगभग २ बजे एस.एस. जैन भवन, बंगारपेट में आपका मंगल प्रवेश हुआ।

चातुर्मास में धर्माराधन का ठाट लगा है। बंगारपेट में स्थानकवासी परम्परा के १४ घर हैं, जिनमें से ११ दम्पतियों ने चार महीनों के लिए शीलव्रत अंगीकार किया है। आषाढ़ी चतुर्दशी को पूरे जैन समाज ने अपनी दुकानें बंद रखीं, धर्माराधना की साधना की एवं आगत संघों के आतिथ्य का सुलाभ लिया। प्रत्येक रविवार को यहाँ बैंगलोर एवं चेन्नई के भाई-बहन अच्छी संख्या में श्रीचरणों में आ रहे हैं। बैंगलोर के उपनगर राजाजीनगर व विजयनगर से श्रीसंघ एवं चेन्नई से रविवार को सकल संघ श्रीचरणों में उपस्थित हुआ। बंगारपेट मध्यम दर्जे का कस्बा है। प्रवचन स्थल अष्टमी, चतुर्दशी एवं शनिवार को लगभग पूरा भर जाता है। रविवार के दिन इतनी उपस्थिति रहती है कि यह स्थल छोटा पड़ने लगता है।

प्रातःकालीन प्रार्थना श्रद्धेय श्री योगेश मुनि जी म.सा. करवा रहे हैं। प्रारम्भ के १५ दिन प्रवचन श्रद्धेय श्री बलभद्रमुनि जी म.सा. एवं महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनि जी म.सा. ने फरमाया। प्रत्येक रविवार को पूज्य आचार्यप्रवर भी

प्रवचनामृत से समागत श्रद्धालुओं को लाभान्वित कर रहे हैं। दोपहर में भगवती सूत्र की वाचना चल रही थी, उसके पूर्ण होने पर आचारांग सूत्र की वाचनी पूज्य आचार्यप्रवर स्वयं श्रीमुख से फरमा रहे हैं। वाचनी के समय नीचे का हॉल लगभग पूरा भर जाता है। सीमित घर होते हुए भी दोपहर की अच्छी उपस्थिति देखते ही बनती है। सायंकालीन प्रतिक्रमण एवं संवर की आराधना करने वालों की भी संख्या अच्छी रहती है। तप-त्याग, व्रत-प्रत्याख्यान, दया-संवर, पौषध, आयम्बिल, एकाशन, उपवास आदि बराबर हो रहे हैं। छोटी एवं बड़ी तपस्याएँ निरन्तर चल रही हैं। २२ से २६ जुलाई तक श्रावकों की एक पचरंगी तथा श्राविकाओं की भी एक पचरंगी हुई है। पूज्य आचार्यप्रवर आदि समस्त संतरत्नों का स्वास्थ्य समाधिमय एवं समीचीन है। तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा. ने चातुर्मासार्थ प्रवेश के दिन से तपस्या प्रारम्भ की थी। १७ दिनों की तपस्या के अनन्तर २१ जुलाई को पारणक हो गया है।

श्रद्धालु भक्तों का आचार्यप्रवर एवं संतवृन्दों की सेवा में आवागमन बना हुआ है। स्थानीय संघ आतिथ्य सत्कार में तो अग्रणी है ही, किन्तु सामायिक-साधना करने का भी सदैव लक्ष्य रहता है।

चातुर्मास स्थल- श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन संघ (स्थानक भवन), एकम्बरम् रोड़, बंगारपेट(कर्नाटक), "Ekambaram Road, Bangarpet-563114(Karnataka)

पत्राचार का पता- १.श्री सुनील कुमार जी नाहटा, No. 553, Bazaar Street, Bangarpet-563114(Karnataka) Ph. 08153-255379, 255579, Mob. 099453-51611, 094480-03709

उपाध्यायप्रवर का चातुर्मासार्थ मंगल-प्रवेश पीपाड़ शहर में

आत्मार्थी, शान्त-दान्त-गंभीर, प्रबल पुरुषार्थी परमश्रद्धेय उपाध्याय पं.रत्न श्री मानचन्द्र जी म.सा., मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. आदि ठाणा ५ आषाढ़ शुक्ला ३ को जोधपुर से बनाड़, देवलिया, डांगियावास, बीनावास, चौड़ावास, भुजकला फरसते हुए आषाढ़ शुक्ला ९ को रींया पधारे। यहाँ से आषाढ़ शुक्ला १०, ६ जुलाई २००६ को प्रातः आपने जब पीपाड़ की ओर चरण बढ़ाये तो श्रावक-श्राविकाओं का पीपाड़ से रीयां की ओर सामने आना प्रारम्भ हो गया। संघ-संरक्षक मण्डल के संयोजक श्रीमान् मोफतराज जी मुणोत, मुम्बई भी रींया से विहार में पैदल सम्मिलित हुए। पीपाड़ पधारने से पूर्व सैकड़ों की संख्या में श्रद्धालुजन उत्साह-उमंग के साथ जयनादों का उच्चारण करते चल रहे थे।

उपाध्यायप्रवर का मंगलमय पदार्पण राता उपासरा में प्रातः लगभग ७.३०.बजे हुआ। राता उपासरा खचाखच भरा था। श्रद्धालु बाहर भी खड़े थे। पीपाड़ में मुणोत स्वाध्याय भवन में शान्तस्वभावी तपस्विनी महासती श्री शांतिकँवर जी म.सा. आदि ठाणा ४ पहले से विराज रहे थे। उपाध्यायप्रवर के आगमन पर वे भी अगवानी में उपस्थित थे।

धर्म सभा को महासती श्री मुदित प्रभा जी म.सा., श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनि जी म.सा., मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनि जी म.सा. आदि संत-सतीवृन्द ने चातुर्मास के सुनहरे अवसर का लाभ उठाने की प्रेरणा की। नन्हें बालक संयम मेहता ने स्वागत गीतिका एवं बहू मण्डल ने स्वागत गीत प्रस्तुत किया। संघ-संरक्षक मण्डल के संयोजक श्री मोफतराज जी मुणोत ने अपने उद्बोधन में कहा - "अत्यन्त पुरुषार्थ से यह बाजी हाथ लगी है। ऐसे अवसर को पाकर हमें जीवन में परिवर्तन लाना है। जन-जन के कल्याणार्थ कार्य कर इसे स्मरणीय बनाना है।" स्थानीय संघ अध्यक्ष श्री हस्तीमल जी बोहरा ने इस अवसर पर सजोड़े शीलव्रत का नियम ग्रहण किया। उपाध्यायप्रवर ने भी प्रवचनामृत से धर्मसभा को लाभान्वित किया। जोधपुर, साथिन, कोसाना, गोटन, भोपालगढ़, बिलाड़ा, रणसीगाँव, खवासपुरा आदि अनेक क्षेत्रों के भाई-बहनों ने इस अवसर पर लाभ लिया।

९ जुलाई को उपाध्यायप्रवर राता उपासरा से विकास केन्द्र कोट में पधारे तो जैन-जैनेत्तर श्रद्धालुओं की उपस्थिति उल्लास को इंगित कर रही थीं। यहाँ भयंकर गर्मी के पश्चात् भी तपस्याएँ गतिशील हैं। आठ, नौ एवं ग्यारह की तपस्याएँ लगभग ३० हो चुकी हैं। तपस्या का क्रम आगे भी ज़ारी है। श्रावण कृष्णा एकादशी से श्रावण कृष्णा अमावस्या तक भाइयों की १ एवं अब तक बहिनों की ४ पचरंगियाँ हो चुकी हैं। श्री सागरमल जी म.सा. एवं आचार्यप्रवर श्री शोभाचन्द्र जी म.सा. की पुण्यतिथि धर्माराधना के साथ मनाई गई। संघ के कर्मठ कार्यकर्ता श्री रमेशचन्द जी बाघमार ने श्रावण कृष्णा अमावस्या को सजोड़े शीलव्रत का नियम अंगीकार किया। कई बहिनों के एकाशन, आयम्बिल एवं उपवास के सिद्धि तप चल रहे हैं। श्रद्धालुओं का अवागमन बना हुआ है तथा संघ का आतिथ्य सत्कार सराहनीय है।

चातुर्मास स्थल- श्री ओसवाल लोडे साजन संघ सभा भवन (कोट), पो. पीपाड़ शहर-३४२६०१, जिला-जोधपुर (राज.)

सम्पर्क सूत्र- (१) श्री सुमतिचन्द जी मेहता, मैसर्स गजराज नेमीचन्द जैन, सदर बाजार, पीपाड़ शहर, जिला-जोधपुर (राज.) फोन नं. ०२९३०-२३३०६९(दु.) २३३८४२(घर) मो. ९४१४४-६२७२९ (२) श्री हस्तीमल जी बोहरा, दुधिया जाव, आदर्श नगर, पो. पीपाड़ शहर, जिला-जोधपुर (राज.) फोन नं. ०२९३०-२३३६६१

महासती मण्डलों का चातुर्मासार्थ मंगल-प्रवेश

जोधपुर- साध्वीप्रमुखा, परमविदुषी, शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरी जी म.सा., तत्त्वचिन्तिका व्याख्यात्री महासती श्री रतनकँवर जी म.सा. आदि ठाणा ७ का घोड़ों का चौक स्थित सामायिक-स्वाध्याय भवन में मंगल प्रवेश ४ जुलाई २००६ को हुआ। श्रावक-श्राविकाओं की लगन यहाँ हो रहे ज्ञानाराधन एवं तपाराधन से ही दृष्टिगत हो रही है। महासती जी की प्रेरणा के फलस्वरूप अभी तक बेले, तेले, पचोले की तपस्याओं के साथ ही २ बहनों ने १५ उपवास की तपस्या, ४ बहनों ने ११ उपवास की तपस्या की है। एक बहिन ने २८ की तपस्या के प्रत्याख्यान लिए हैं तथा रक्षाबंधन के दिन ३१ के प्रत्याख्यान की भावना है। दया व उपवास की पचरंगिया भाइयों में १ व बहिनों में २ हुई है। श्रावण शुक्ला अष्टमी को २०० से अधिक आयम्बिल व नीवी तप हुए। श्रावण कृष्णा एकादशी से अमावस्या तक धार्मिक प्रश्नोत्तर परीक्षा की शृंखला निरन्तर गतिमान है। ७ बहिनें एकान्तर तप कर रही हैं। प्रत्येक पर्व तिथियों पर संवर-पौषध अच्छी संख्या में हो रहे हैं। प्रतिदिन प्रवचन में अच्छी उपस्थिति रहती है।

चातुर्मास स्थल- जैन स्थानक, घोड़ों का चौक, जोधपुर-३४२००६(राज.)

जावला-सेवाभावी महासती श्री संतोषकँवर जी म.सा. आदि ठाणा ४ का मंगलप्रवेश ३० जुलाई को सादगीपूर्ण वातावरण में हुआ। चातुर्मास प्रवेश के समय से ही जावला के श्रद्धालु श्रावक-श्राविकाओं में धर्माराधन, तपाराधन एवं ज्ञानाराधन बराबर चल रहा है। महासती जी के मुखारविन्द से श्रीमती धापूदेवी धर्मपत्नी श्री धर्मीचन्द जी कोचेटा ने २७ के प्रत्याख्यान लिए हैं तथा ३१ की तपस्या के भाव हैं एवं श्रीमती चंचलदेवी धर्मपत्नी श्री ज्ञानचन्द जी सोनी, ब्यावर ने १० के प्रत्याख्यान लिए हैं तथा आगे बढ़ने के भाव हैं। *-नटराज कोठारी, जावला*

चातुर्मास स्थल- जैन स्थानक, पो. जावला, जिला-नागौर (राज.)

जबलपुर- व्याख्यात्री महासती श्री तेजकँवर जी म.सा. आदि ठाणा ७ का चातुर्मासार्थ प्रवेश ६ जुलाई २००६ को सकल जैन श्वेताम्बर संघ, जबलपुर के सान्निध्य में बड़े ही उत्साह-उमंग के साथ हुआ। चातुर्मास में धर्माराधना, तप-त्याग एवं ज्ञानाराधन का क्रम चल हा है। प्रार्थना, प्रवचन, प्रतिक्रमण के साथ अपराह्न में २.३० से ४.०० बजे तक धर्म-चर्चा होती है।जबलपुर संघ का उत्साह उल्लेखनीय है।

चातुर्मास स्थल- जैन स्थानक भवन (सेठ निहालचन्द कॉम्पलेक्स), पेट्रोल पम्प के पास, गोरखपुर मेन रोड़, जबलपुर-४८२००१ (म.प्र.) फोन नं. ०७६१-४०१७०३३

वेल्लूर- विदुषी महासती श्री सुशीलाकँवर जी म.सा. आदि ठाणा ७ का चातुर्मासार्थ प्रवेश ६ जुलाई २००६ को प्रातः ६.३० बजे सत्वाचारी से वेल्लूर जैन स्थानक में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी व गुरु भगवन्तों की जय-जयकारों के साथ हुआ। यहाँ पर पूज्य महासती जी की प्रेरणा से चातुर्मास प्रारम्भ से ही धर्म-ध्यान, तप-त्याग व जिनवाणी का ठाट लगा हुआ है। उपवास, बेला, तेला, पाँच एवं ग्यारह की तपस्याएँ यहाँ हुई हैं तथा अन्य छोटी-बड़ी तपस्याएँ चालू है। ८ दिन का नवकार महामंत्र का जाप भी सम्पन्न हुआ है।

चातुर्मास स्थल-जैन प्रेयर हॉल, नं. १,कालीमन कॉयल स्ट्रीट,वैल्लूर-६३२००४ (तमिलनाडु)

कानपुर- विदुषी महासती श्री सौभाग्यवती जी म.सा. आदि ठाणा ४ का ६ जुलाई को प्रातः ६ बजे श्रीमान पारस जी कवाड़ के निवास स्थान तिलकनगर से ५-६ कि.मी. का निराडम्बर विहार के साथ 'माता रूक्मणी जैन भवन' खोया बाजार स्थानक में प्रातः ७.३० बजे मंगल प्रवेश हुआ। आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी को चातुर्मास का प्रारम्भ तप-त्याग से हुआ। चातुर्मास के प्रारम्भ से ही तपस्या की झड़ी लग गई। श्रद्धालु श्रावक-श्राविकाओं ने उपवास, बेला, तेला, एकाशन,आयम्बिल आदि तप के नियम लिए। प्रातःकाल ६ बजे से सायंकाल ६ बजे तक नवकारमंत्र का जाप प्रारम्भ हुआ, जो नियमित रूप से चल रहा है। प्रातः ९ से १० बजे तक प्रवचन एवं उसके पश्चात् धार्मिक सिद्धान्तों की जानकारी के लिए शिविर का आयोजन किया गया है। २३ जुलाई को उपाध्याय श्री केवलमुनि जी म.सा. का जन्म-दिवस एवं पूज्य श्री सागरचन्द जी म.सा. का पुण्य दिवस 'लोगस्स' पाठ के जाप के साथ मनाया गया। आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की परीक्षा में १७ परीक्षार्थियों ने भाग लिया। २५ जुलाई को आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म.सा. का पुण्य-स्मृति दिवस तथा २६ जुलाई को आचार्य श्री आनन्दऋषि जी म.सा. का जन्म-दिवस तप-त्याग के साथ मनाया गया। यहाँ पर एकान्तर तप, ग्यारह उपवास, अठाई, तेले आदि के साथ आयम्बिल, एकाशन एवं उपवास की तप-आराधना चल रही है।

-दौलतराम जैन, अध्यक्ष, फोन नं. ९३३६२७३३०१

चातुर्मास स्थल- श्री जैन श्वे. स्थानकवासी संघ, ४६/७३, रूक्मणी जैन भवन, खोया बाजार, लोहाई हटिया, कानपुर-२०८००१ (उ.प्र.)

आवासन मण्डल, सवाईमाधोपुर-व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकँवर जी म.सा.आदि ठाणा ६ का श्री जैन रत्न स्वाध्याय भवन, आवासन मण्डल, सवाईमाधोपुर में मंगल प्रवेश गुरु हस्ती-हीरा-मान के जयकारों के साथ ५ जुलाई को

प्रातः ८.३० बजे हुआ। महासती मण्डल ने आलनपुर जैन स्थानक से विहार किया। विहार में नर-नारी एवं बालक-बालिकाओं में अपार उत्साह था। आस-पास के ग्राम-नगरों से भी श्रद्धालु श्रावक-श्राविकाओं की उपस्थिति उत्साहवर्द्धक थी। चातुर्मास काल में सामायिक, स्वाध्याय एवं ज्ञानाराधन के साथ तपाराधन की धर्मक्रियाएँ निरन्तर चल रही हैं। चातुर्मास प्रारम्भ से ४० तेले, १० अठाई एवं ३ ग्यारह दिवसीय उपवास हो चुके हैं। ०७ अगस्त को एक बहन के २९ की तपस्या चल रही थी। महासती श्री विमलावती जी म.सा.ने भी ८ की तपस्या पूर्ण की है। व्याख्यान में प्रतिदिन २५० से ३०० की उपस्थिति रहती है, अष्टमी, चतुर्दशी एवं रविवार को ५०० तक संख्या पहुँच जाती है। सवाईमाधोपुर शहर, बजरिया, आलनपुर, आदर्श नगर आदि सभी स्थानों से श्रद्धालु प्रवचन में उपस्थित रहते हैं। *-श्यामसुन्दर जैन, अध्यक्ष*

चातुर्मास स्थल- स्वाध्याय भवन, ३/४८, आवासन मण्डल, सवाईमाधोपुर(राज.)

कोटा-व्याख्यात्री महासती श्री शांतिप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा ५ का चातुर्मासार्थ मंगल प्रवेश रामपुरा बाजार स्थित स्थानक भवन में ५ जुलाई को प्रातःकाल हुआ। आपने प्रातः ६.४५ बजे वल्लभ बाड़ी से विहार किया। चातुर्मास में प्रार्थना प्रवचन आदि के साथ ज्ञानाराधन, तपाराधन एवं धर्माराधन के विविध कार्यक्रम चल रहे हैं। महासती मण्डल ने चातुर्मास के पहले कोटा की रिद्धि-सिद्धि कॉलोनी, वल्लभबाड़ी, छावनी, विज्ञाननगर, महावीर नगर तृतीय, टीचर कॉलोनी, जवाहर नगर, तलवण्डी, बसन्तविहार, दादावाड़ी, गुलाबवाड़ी आदि उपनगरों में लगभग २६ दिन विचरण किया। *- बुद्धिप्रकाश जैन, फोन नं. ९४१४१-७७१३९*

चातुर्मास स्थल- श्री वर्द्ध. स्थानकवासी जैन श्री संघ (स्थानक भवन), रामपुरा बाजार, कोतवाली के सामने वाली गली, कोटा (राज.)

काचीगुड़ा-हैदराबाद- व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा. आदि ठाणा ५ ने ५ जुलाई २००६ को काचीगुड़ा में चातुर्मासार्थ मंगल प्रवेश किया। यहाँ श्रावक-श्राविकाओं ने चातुर्मास प्रारम्भ से ही धर्माराधन, ज्ञानाराधन एवं तपाराधन में अपना अपूर्व उत्साह दर्शाया है। युवक एवं युवतियाँ जो धर्म से विमुख होते जा रहे हैं, उनके लिए विशेष रूप से महासती श्री भाग्यप्रभा जी म.सा. के 'एक कदम धर्म की ओर' पर हृदयस्पर्शी उद्बोधन जारी हैं। युवकों का उत्साह काबीले तारीफ है। दोपहर को धर्म-चर्चा के माध्यम से महिलाओं में विशेष जागृति हेतु प्रयास हो रहा है। प्रति रविवार जैन धार्मिक शिक्षण संस्कार शिविर का आयोजन भी किया जा रहा है। आसपास के श्रद्धालुओं का आवागमन बना हुआ है। काचीगुड़ा श्रीसंघ भी आतिथ्य-लाभ लेकर

प्रमुदित है।

चातुर्मास स्थल- श्री श्वे.स्थानकवासी जैन श्रावक संघ (श्री पूनमचन्द जी गाँधी जैन स्थानक भवन) काचीगुड़ा रेलवे स्टेशन के सामने, ३-४-१०२२, काचीगुड़ा, हैदराबाद-५०००२७(आ.प्र.) फोन न. ०४०-२७५६४८२०

पाली-मारवाड़- व्याख्यात्री महासती श्री निःशल्यवती जी म.सा. आदि ठाणा ३ का मंगल प्रवेश पाली के सुराणा भवन में श्रावक-श्राविकाओं द्वारा जय-जयकारों के नाद के साथ हुआ। इस अवसर पर पाली के आसपास के क्षेत्रों के श्रद्धालु जन भी उपस्थित थे। पाली धर्मध्यान के क्षेत्र में अग्रणी रहा है, तदनुसार यहाँ दया-संवर, उपवास-पौषध, आयम्बिल, एकाशन एवं अन्य बड़ी तपस्याएँ लगातार चल रही हैं।

चातुर्मास स्थल- सामायिक-स्वाध्याय भवन,सुराणा मार्केट, पाली-मारवाड़-३०६४०१(राज.), फोन नं. ०२९३२-२५००२१

गदग (कर्नाटक)- व्याख्यात्री महासती श्री मुक्तिप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा ३ का चातुर्मासार्थ मंगल प्रवेश ६ जुलाई को गदग में हर्षोल्लास के वातावरण में हुआ। चातुर्मास के दिन १० जुलाई से यहाँ पर उपवास एवं तेले की लड़ी प्रारम्भ हो गई है। आयम्बिल, एकाशन की लड़ी भी चालू है। श्री शांतिलाल जी एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती उलासीबाई जी लुंकड़ तथा संघाध्यक्ष श्री बाबूलाल जी रघुनाथमल जी लुंकड़ एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती बिदामबाई ने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत स्वीकार किया है। श्री रूपचन्द जी पालरेचा की पुत्रवधू के २२ जुलाई को १४ उपवास हो गए हैं तथा आगे उपवास जारी हैं। १० जुलाई को चौदस के दिन सभी व्यवसाय बन्द रहे। बड़ी संख्या में एकाशन, उपवास, बेला, तेला, चौला आदि के प्रत्याख्यान हुए।

चातुर्मास स्थल- श्री जैन स्थानक भवन, महावीर रोड़, गदग-५८२१०१(कर्नाटक)

सहकार नगर, नाशिक- सेवाभावी महासती श्री विमलेशप्रभाजी म.सा.आदि ठाणा ३ का चातुर्मासार्थ मंगल प्रवेश ६ जुलाई २००६ को हुआ। प्रार्थना, प्रवचन, शास्त्र वाचनी एवं प्रतिक्रमण आदि कार्यक्रमों में नाशिक के श्रावक-श्राविकाओं की अच्छी उपस्थिति रहती है। दया-संवर, आयम्बिल, एकाशन, उपवास-पौषध आदि भी लगातार चल रहे हैं।

चातुर्मास स्थल- जैन स्थानक, गंजमाल, सहकार नगर, नासिक (महा.)

भोपालगढ़- महासती श्री विनीतप्रभा जी म.सा.आदि ठाणा ३ का चातुर्मासार्थ मंगल प्रवेश दिनांक ६ जुलाई २००६ को भोपालगढ़ में जैन-जैनेतर भाई-बंहनों के विशाल जनसमूह के साथ उत्साहपूर्वक जय-जयकारों से हुआ। चातुर्मास प्रारम्भ से

महासती मण्डल का ओजस्वी, मधुर एवं प्रभावशाली प्रवचन चल रहा है। प्रवचन के प्रभाव से कई भाई-बहनों ने रात्रि-भोजन, जमीकन्द एवं सप्त कुव्यसन का त्याग किया हैं। चतुर्दशी (१०.७.०६) को उपवास, एकाशन, पौषध, संवर आदि अच्छी संख्या में हुए। बहनों में पचरंगी हो चुकी है। २३ से २५ जुलाई के बीच एकाशन के ५० तेले एवं उपवास के ४ तेले हुए हैं। दो बहनों के ३० जुलाई को अठाई तप था। भाइयों के एकाशन की लड़ी चल रही है।

चातुर्मास स्थल- पुराना स्थानक, भोपालगढ़-३४२६०३, जिला-जोधपुर(राज.)

जयपुर में चार केन्द्रों पर धार्मिक शिक्षण शिविर

श्री जैन रत्न युवक परिषद्, जयपुर द्वारा १६ मई से १५ जून २००६ तक सांगानेरी गेट स्थित सुबोध स्कूल में तथा २६ मई से १५ जून २००६ तक महावीर नगर, जवाहर नगर और नित्यानन्द नगर में बालक-बालिकाओं का धार्मिक शिक्षण शिविर आयोजित किया गया। चारों स्थानों पर कुल ४५० बालक-बालिकाओं ने शिविर में भाग लेकर अनुभवी अध्यापकों से धार्मिक, नैतिक एवं संस्कार-निर्माण से संबंधित शिक्षा ग्रहण की। शिविर का समय प्रातः ७ से ९ बजे तक रहा। शिविर के मुख्य संयोजक श्री पीयूष जी जैन ने चारों केन्द्रों पर सह-संयोजक अलग से बनाए थे। सभी केन्द्रों पर शिविरार्थियों को लाने ले जाने हेतु वाहन की व्यवस्था की तथा शिविर-स्थल पर अल्पाहार की भी व्यवस्था रही। इस ग्रीष्मकालीन शिविर का पुरस्कार वितरण समारोह ९ जुलाई २००६ को सुबोध पब्लिक स्कूल के सभागार में श्रीमान् अमिताभ जी हीरावत की अध्यक्षता एवं श्रीमान कुलदीप जी रांका, प्रबन्ध निदेशक रीको के मुख्यातिथ्य में सम्पन्न हुआ। विशिष्ट अतिथि थे- श्रीमान् कैलाशचन्द जी हीरावत, श्रीमान् सुमेरसिंह जी बोथरा एवं श्रीमान् प्रेमचन्द जी जैन।

इस अवसर पर **'गुणीजन सम्मान'** के अन्तर्गत तपस्वी श्री पूनमचन्द जी दूगड़ एवं डॉ. मंजुला जी बम्ब का शॉल एवं प्रशस्तिपत्र से सम्मान किया गया। दूगड़ सा. ने अब तक १८ मासखमण एवं कई अठाई तप किए हैं। डॉ. मंजुला जी का सम्मान अपना सम्पूर्ण समय संघ-सेवा एवं संत-सती सेवा में समर्पित करने की प्रमोदाभिव्यक्ति हेतु किया गया।

मुख्यातिथि कुलदीप जी रांका ने अपने वक्तव्य में कहा- "जीवन में यदि आगे बढ़ना है तो नैतिक संस्कारों का होना अत्यन्त आवश्यक है।" समारोह में शिविरार्थियों को पुरस्कृत किया गया तथा अध्यापकों का धन्यवाद पत्र एवं पुस्तकें भेंट कर अभिनन्दन किया गया। शाखाप्रमुख श्री प्रमोद जी हीरावत ने सबका हार्दिक

स्वागत किया वहीं धन्यवाद ज्ञापन संयुक्त सचिव श्री प्रशान्त जी कर्णावट ने किया।

-प्रशान्त कर्णावट

'कर्म संहिता' ग्रन्थ पर आयोजित अखिल भारतीय जैन ज्ञान प्रतियोगिता

उप. महासाध्वी पू. विमला श्री जी म.सा. की दीक्षा स्वर्ण जयंती एवं साध्वी युगल निधि-कृपा श्री जी म.सा० की दीक्षा रजत जयन्ती के उपलक्ष्य में 'श्रुत-आराधना वर्ष' में घर-घर में त्रिकाल प्रकाशक कर्म-सिद्धान्त का स्वाध्याय हो इस हेतु 'कर्म संहिता' ग्रन्थ पर ओपन बुक परीक्षा का आयोजन किया जा रहा है, जिसका शुभारम्भ ३ नवम्बर २००६ को होगा। इसमें चार माह में 'कर्म संहिता' के माध्यम से कर्म बंधन से कर्ममुक्ति तक के द्वादश अध्यायों में से ५०० प्रश्नों के उत्तर पूर्ण, शुद्ध एवं स्पष्ट रूप से लिखकर २० मार्च २००७ तक भेजने होंगे। प्रतियोगिता में पूर्ण अंक प्राप्त करने वाले को श्रुतनिधि पुरस्कार १ लाख ५१ हजार रुपये का, सर्वाधिक अंक विजेता को श्रुतप्रणति पुरस्कार ५१ हजार रुपये का प्रदान किया जायेगा। इसके अतिरिक्त १ से ७ मेरिट प्राप्त करने वाले, राज्य में प्रथम, शीघ्र प्रतियोगी, ए ग्रेड एवं अजैन प्रतियोगी के लिए विशिष्ट श्रुत सम्मान पुरस्कार भी है। प्रतियोगिता हेतु ग्रन्थ का मूल्य १५०/- डाक द्वारा २००/- एवं प्रश्नपुस्तिका का मूल्य ५० रुपये डाक द्वारा ६० रुपये है। प्रतियोगी डी.डी./नगद/एम.ओ. ''मैत्री चैरिटेबल फाउण्डेशन, दिल्ली'' के पते पर भेजें ताकि १ नवम्बर तक सामग्री भेजी जा सके। असमर्थ प्रतियोगी अर्द्धमूल्य में ग्रन्थ-प्राप्ति हेतु दिल्ली के पते से सहयोग-पत्र मँगवाएँ एवं भरकर भेजें। ट्रस्ट द्वारा स्वीकृत होने पर ग्रन्थ भेजा जायेगा। दिल्ली का पता है- मैत्री चैरीटेबल फाउण्डेशन, द्वारा मृदु-प्रदीप जैन, बी-११७, ओखला इण्डस्ट्रियल एरिया, प्रथम फेज, नई दिल्ली-११००२०, फोन नं. ०१२९-४०८३४४४, मो. ०९३१३०-९३४४४, वेबसाइट- www. sadhviyugal.com

जोधपुर में जैन ज्ञान प्रतियोगिता का आयोजन

श्री महावीर युवा संघ, जोधपुर द्वारा दिनांक १७.९.०६ को जैन ज्ञान प्रतियोगिता का आयोजन किया जा रहा है। प्रतियोगिता इस वर्ष जोधपुर के अलावा बालोतरा एवं पाली में भी आयोजित की जाएगी। इस प्रतियोगिता में ८ साल से ऊपर के आबाल-वृद्ध भाग ले सकते हैं। उक्त प्रतियोगिता में जैन धर्म, नैतिक संस्कार एवं सामान्य ज्ञान से संबंधित प्रश्नोत्तर की प्रश्नपुस्तिका का वितरण किया जाएगा एवं १७ सितम्बर को उसकी लिखित परीक्षा आयोजित की जाएगी। इस परीक्षा में मेरिट में

आने वाले १५ प्रतिभागियों को २३-२४ सितम्बर २००६ को नवम विराट् जैन स्नेह मिलन समारोह में आयोजित मैगा क्विज शॉ में शामिल किया जाएगा। इस प्रतियोगिता के संयोजक श्री गजेन्द्र जी चौपड़ा हैं। प्रश्नपुस्तिका का वितरण पर्युषण पर्व में दिनांक २१ से २८ अगस्त के दौरान किया जायेगा। इसके अलावा भी जैन स्नेह मिलन समारोह के अवसर पर अन्य कई कार्यक्रम आयोजित किए जायेंगे।

-शांतिचन्द लोढ़ा, अध्यक्ष

जोधपुर में ओसवाल रत्नप्रभसूरि शोध संस्थान का शुभारम्भ

ओसवाल समाज के इतिहास पर सूक्ष्म एवं व्यापक शोध-अनुसंधान कार्य के लिए जोधपुर में ओसवाल रत्नप्रभसूरि शोध संस्थान का शुभारम्भ किया गया है। ओसवाल समाज के समग्र इतिहास, दर्शन एवं चरित्र पर व्यापक शोध, अनुसंधान एवं परीक्षण कर इसे एक वृहत्तर दिशा देने की दृष्टि से स्थापित ओसवाल रत्नप्रभसूरि शोध संस्थान का विधिवत् स्थापना समारोह २५ जुलाई को भैरूबाग जैन तीर्थ सभागार में राजस्थान सरकार के पूर्व अतिरिक्त महाधिवक्ता डॉ. सम्पतसिंह जी भाण्डावत की अध्यक्षता एवं 'ओसवाल महिमा' पत्रिका के प्रधान संरक्षक समाजसेवी श्री नगराज जी मेहता के मुख्य आतिथ्य में सम्पन्न हुआ।

शोध संस्थान के संस्थापक निदेशक संघवी मिट्ठूलाल डागा ने कहा कि यह शोध संस्थान ओसवाल समाज के सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आर्थिक, राष्ट्रीय विकास, मानवीय सेवा, देश की आजादी एवं विश्व की महानतम शिल्पकला व कलात्मक मंदिरों, तीर्थों के निर्माण के माध्यम से भारत को विश्व का सिरमौर बनाने जैसे समस्त प्रकार के महत्त्वपूर्ण तथ्यों, घटनाओं, वृत्तान्तों, इतिहास व नाना प्रकार के योगदानों पर एक नई सोच व दिशा के साथ कार्य करेगा।

समारोह के मुख्य वक्ता श्री सोहन मेहता ने देश की आजादी, मातृभूमि की रक्षा, देश के विकास एवं मानवता के क्षेत्र में किये गये असाधारण योगदान एवं अभूतपूर्व त्याग व बलिदान पर व्यापक विवेचना की।

पार्श्वनाथ विद्यापीठ निबन्ध प्रतियोगिता का परिणाम घोषित

"विज्ञान के क्षेत्र में अहिंसा की प्रासंगिकता" विषय पर पार्श्वनाथ विद्यापीठ द्वारा आयोजित निबन्ध प्रतियोगिता २००५-०६ का परिणाम घोषित कर दिया गया है। इस निबन्ध प्रतियोगिता के लिए ग्रुप 'ए' (१८ वर्ष से कम आयु वर्ग वाले प्रतिभागी) एवं ग्रुप 'बी' (१८ वर्ष से अधिक आयु वर्ग वाले प्रतिभागी) में कुल

क्रमशः ५ एवं २० निबन्ध प्राप्त हुए। निर्णायक मण्डल (प्रो. सुदर्शनलाल जैन-पूर्व कला संकाय प्रमुख, का.हि.वि.वि.-वाराणसी, प्रो. फूलचन्द जैन- जैन दर्शन विभाग, श्रमण विद्या संकाय, स.सं.वि.वि., वाराणसी एवं डॉ. धर्मचन्द जैन- एसोशिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर) ने दोनों ग्रुपों के लिए जिन प्रतिभागियों का प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय पुरस्कार हेतु चयन किया है, वे हैं-

ग्रुप ए-	प्रथम पुरस्कार : हिमांशु सिंघवी-जोधपुर	२५००/-
	द्वितीय पुरस्कार : सुश्री प्रियंका चोरडिया-छिपावड़	१५००/-
	तृतीय पुरस्कार : कु. निकिता चौपड़ा-राजनांदगाँव	१०००/-
ग्रुप बी-	प्रथम पुरस्कार : श्रीमती सरोज गोलेछा-राजनांदगाँव	२५००/-
	द्वितीय पुरस्कार : श्रीमती नूतन मितेश जैन-सघनावों एवं श्रीमती कमलिनी बोकारिया-बीड़	१५००/-
	तृतीय पुरस्कार : श्री छैलसिंह सिंह राठौड़-जोधपुर एवं श्री रामस्वरूप जैन-सवाईमाधोपुर	१०००/-

ग्रुप बी के लिए द्वितीय एवं तृतीय पुरस्कार की पुरस्कार राशि को संयुक्त विजेताओं में बराबर-बराबर बाँट दिया जायेगा।

विजेता सभी प्रतिभागियों को पार्श्वनाथ विद्यापीठ में दिनांक १५ से १७ दिसम्बर २००६ को आयोजित "Contribution of Shraman Tradition to Indian Culture & Tourism" "भारतीय संस्कृति एवं पर्यटन को श्रमण परम्परा का अवदान" विषयक त्रिदिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी के अवसर पर एक सादे समारोह में पुरस्कार एवं प्रमाण पत्र देकर सम्मानित किया जायेगा तथा उनके निबंधों को श्रमण (पार्श्वनाथ विद्यापीठ की शोध त्रैमासिक पत्रिका) में साभार प्रकाशित किया जायेगा। प्रतिभागियों को विद्यापीठ आने हेतु समय एवं तिथि की सूचना बाद में प्रेषित की जायेगी। बुलाये गये प्रतिभागियों को एक तरफ का मार्ग व्यय (द्वितीय शयनयान श्रेणी-रेलवे) विद्यापीठ द्वारा देय होगा।

-डॉ. श्रीप्रकाश पाण्डेय : संयोजक, निबंध प्रतियोगिता

सूचना

श्री जैन रत्न उच्च माध्यमिक विद्यालय, भोपालगढ़ जिला-जोधपुर (राज.) ३४२६०३ में विज्ञान (जीव विज्ञान व गणित) एवं वाणिज्य निकाय की ग्यारहवीं एवं

बारहवीं कक्षाओं के अनुभवी और दक्ष व्याख्याताओं की व्यवस्था है, साथ में जैन दर्शन पर आधारित नैतिक शिक्षा भी दी जाती है। जो भी छात्र इस व्यवस्था का लाभ उठाना चाहें वे तुरन्त प्रधानाचार्य से सम्पर्क करें। २० या उससे अधिक जैन छात्र होने पर छात्रावास भवन में भोजन व रहने की व्यवस्था भी की जा सकती है। *-प्रसन्नचन्द ओस्तवाल, निदेशक, श्री जैन रत्न उच्च मा. विद्यालय, पो. भोपालगढ़, जिला-जोधपुर (राज.), फोन नं. ०२९२०-२२२२८०*

बधाई/चुनाव

जलगाँव- श्री श्रेयांस रायसोनी सुपुत्र श्रीमती भारती एवं श्री निलिन जी रायसोनी

तथा सुपौत्र श्री प्रेमचन्द जी रायसोनी ने महाराष्ट्र टेलेन्ट सर्च परीक्षा में १२३ अंक अर्जित कर योग्यता सूची में स्थान प्राप्त किया है। श्रेयांस धार्मिक शिविरों में भी भाग लेकर ज्ञानार्जन करता रहता है।

जयपुर- सुश्री अदिति जैन सुपुत्री श्री विमलचन्द जी जैन का वर्ष २००६ की आर.पी.एम.टी. परीक्षा में चयन हो गया है। उन्होंने ८९ प्रतिशत अंक प्राप्त किए । प्रतिभाशाली छात्रा को हार्दिक बधाई।

अलीगढ़ टोंक- नवकार जैन सुपुत्र श्री महेन्द्रकुमार जी सुपौत्र श्री धन्नालाल जी जैन (पाटोली वाले) ने आठवीं बोर्ड परीक्षा में ९१.७८ प्रतिशत अंक प्राप्त कर उच्च स्थान प्राप्त किया है। वह धार्मिक शिक्षण शिविरों में भी ज्ञानार्जन करता रहता है।

जोधपुर- श्री जैन रत्न युवक परिषद्, जोधपुर के पूर्व सचिव श्री शांतिचन्द जी लोढ़ा

का श्री महावीर युवा संघ, जोधपुर के अध्यक्ष पद पर मनोनयन किया गया है। लोढ़ा जी हमेशा समाजसेवा एवं स्वधर्मी-वात्सल्य-सेवा में अग्रणी रहे हैं। अध्यक्ष का पदभार संभालते ही आपने महावीर युवा संघ के सदस्यों के सहयोग से २० बकरों को छुड़वाकर जीवदया का अनुकरणीय आदर्श उपस्थित किया है। आपकी धार्मिक क्षेत्र में भी अच्छी रुचि है।

मुम्बई- श्री वर्द्ध. स्था. जैन श्रावक संघ, जे.बी. नगर, अंधेरी (पूर्व) की बैठक में श्री विजय जी डागा को अध्यक्ष, श्री माणकचन्द जी पींचा को महामंत्री, श्री अमर जी बाफना को संयुक्त मंत्री तथा श्री नवरतनमल जी जैन को कोषाध्यक्ष चयनित किया

गया है।

नागपुर- भारतीय जैन संघटना के विदर्भ क्षेत्र के अध्यक्ष पद पर सुश्रावक श्री

महेन्द्रकुमार जी कटारिया को नियुक्त किया गया है। भारतीय जैन संघटना के अ. भा. अध्यक्ष श्री शांतिलाल जी मुथा हैं तथा महाराष्ट्र राज्य के अध्यक्ष श्री गौतम जी संचेती हैं। श्री कटारिया जी श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के अग्रणी सुश्रावक हैं।

संक्षिप्त समाचार

जोधपुर- श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा महिलाओं में धार्मिक एवं नैतिक ज्ञानार्जन हेतु वर्ष में दो बार शिविर का आयोजन किया जाता है। इसी के अन्तर्गत ग्रीष्मकालीन सप्तदिवसीय शिविर का आयोजन दिनांक २४ जून से ३० जून तक नेहरू पार्क स्थानक में किया गया। शिविर में अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की कक्षा पहली से आठवीं तक के पाठ्यक्रमानुसार ६० शिविरार्थियों को प्रबुद्ध अध्यापकों श्रीमती सुशीला जी बोहरा, श्रीमती मोहिनी जी कच्छवाहा, श्रीमती अकलकंवर जी मोदी, श्रीमती पुष्पा जी लोढ़ा, श्री नरतपराज जी चौपड़ा आदि द्वारा अध्यापन कराया गया। शिविर में कक्षा १ से ७ तक ज्ञान का मूल्यांकन करने हेतु परीक्षा का आयोजन किया गया। परीक्षा में प्रथम, द्वितीय व तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले परीक्षार्थियों को पारितोषिक दिया गया तथा सभी शिविरार्थियों व अध्यापकों को पुरस्कार प्रदान किया गया। शिविर का समापन समारोह ३० जून को रखा गया।

-सुनीता मेहता, अध्यक्ष

चेन्नई- श्री सुमति विशाल जैन बुक बैंक के माध्यम से चेन्नई एवं उसके उपनगरों में अध्ययनरत इंजीनियरिंग और कम्प्यूटर साइंस के जरूरतमंद छात्रों को प्रतिवर्ष निःशुल्क पुस्तकें वितरित की जाती हैं। अब तक ७१७९ छात्र इस बुक बैंक से लाभान्वित हो चुके हैं। इस वर्ष ६ अगस्त ०६ को वाणी महल टी. नगर में ३०० जरूरतमंद छात्रों को निःशुल्क पुस्तक वितरण का कार्यक्रम है।

-विनोद एम. गुन्देचा, अध्यक्ष

जोधपुर- बुद्धि, पराक्रम और प्रतिभायुक्त सभ्यता एवं संस्कृति से गौरवान्वित ओसवाल जाति का २४६३ वाँ ओसवाल स्थापना दिवस समारोह २४ जुलाई को सम्पूर्ण देश में १०० से अधिक नगरों में उत्साहपूर्वक मनाया गया। जोधपुर में त्रिदिवसीय कार्यक्रम रखा गया। २३ जुलाई को वरिष्ठ स्वजन एवं सरस्वती रत्न सम्मान समारोह में जीवन के आठ दशक पूर्ण करने वाले बुजुर्गों तथा प्रतिभाशाली

छात्र-छात्राओं का सम्मान किया गया। २४ जुलाई का समारोह ओसियाँ में हुआ तथा २५ जुलाई को जोधपुर में विराजित सन्त-सतियों के सामूहिक प्रवचन हुए।

टोंक- अनाथ, अपंग, दीन-दुःखी, निर्धन विद्यार्थी, रोगी व निरीह पशु-पक्षियों की सहायतार्थ आदि पारमार्थिक कार्यो हेतु तथा प्रभावना व स्वाध्याय के लिए स्वल्प मूल्य में उत्तम आध्यात्मिक साहित्य प्राप्त करने हेतु सम्पर्क करें। *-जशकरण डागा : मंत्री, जीवदया मण्डल ट्रस्ट, डागा सदन, संघपुरा मौहल्ला, पो. टोंक (राज.) दूरभाष-०१४३२-२४३०४१*

बड़ी सादड़ी- श्री समता प्रचार संघ द्वारा २८ मई से ४ जून २००६ तक रतलाम में धर्मपाल क्षेत्रीय शिविर आयोजित किया गया। *-सज्जनसिंह मेहता 'साथी'*

गुलाबपुरा (राज.)- श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ, गुलाबपुरा का वार्षिक अधिवेशन १३ अगस्त २००६ को अजमेर में आयोजित होगा। १० से १२ अगस्त तक स्वाध्यायी प्रशिक्षण शिविर एवं स्वाध्यायी महिला शिविर भी आयोजित होंगे।

भीलवाड़ा- संघनायक 'शास्त्री' श्री पद्मचन्द जी म.सा. के आज्ञानुवर्ती युवामनीषी आगमज्ञ 'राजर्षि' श्री राजेन्द्रमुनि जी म.सा. आदि ठाणा का चातुर्मास भीलवाड़ा में चल रहा है। आप चातुर्मास के पूर्व जयपुर के विभिन्न उपनगरों में पधारे, जहाँ आपका अच्छा प्रभाव रहा। टोडरमल स्मारक में स्थानकवासी संतों का प्रथम बार प्रवचन हुआ। आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. की पुण्यतिथि सामायिक, संवर तथा तप-त्यागपूर्वक मनायी गई। भीलवाड़ा के शान्तिभवन में आपका चातुर्मास धर्माराधना की लहर के साथ दीप्त हो रहा है।

श्रद्धाञ्जलि

जोधपुर- संघ-समर्पित उदारमना सरल हृदय सुश्रावक श्रीमान् बाबूलाल जी चौपड़ा

का ७७ वर्ष की आयु में हृदयगति रुक जाने से ५ जुलाई २००६ को स्वर्गवास हो गया। आप प्रतिदिन सामायिक-स्वाध्याय करते थे। परमश्रद्धेय श्री चौथमल जी म.सा., ज्ञानमुनि जी म.सा. की प्रेरणा पाकर आप स्वयं धर्म-साधना से जुड़े एवं सम्पूर्ण चौपड़ा परिवार को भी धर्मकार्य से जोड़ा। सामायिक-स्वाध्याय भवन, नेहरू पार्क को क्रय करने में आपकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही थी। आप नेहरू पार्क स्थित सामायिक-स्वाध्याय भवन में नियमित सामायिक हेतु पधारते थे। अपने आवास के सामने स्थित कुम्भट भवन में विराजने वाले संत-सती वर्ग की सेवा-शुश्रूषा के साथ आप धार्मिक एवं सामाजिक कार्यो में भी सदैव अग्रणी रहते थे। रात्रि-भोजन एवं जमीकन्द का

त्याग, लिलोती की मर्यादा तथा नवकारसी व अन्य त्याग-प्रत्याख्यान आपने ग्रहण कर रखे थे। परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के मुखारविन्द से सन् १९९१ में आपने शीलव्रत का खन्द लिया था। रुग्णावस्था में आप पूरे चौपड़ा परिवार को साथ लेकर हाउसिंग बोर्ड स्थानक में विराजित उपाध्यायप्रवर आदि ठाणा के दर्शनार्थ पधारे। जीवन की अन्तिम अवस्था में कुम्भट भवन विराजित महासती जी म.सा. से मांगलिक लेकर आपने नश्वर देह का त्याग किया। आपने कुछ वर्ष पूर्व अपनी संसार पक्षीय भाणजी सुनिधि जी म.सा. से व्यापार-निवृत्ति के प्रत्याख्यान किये थे। आप अपने पीछे भरापूरा संस्कारशील परिवार छोड़कर गए हैं।

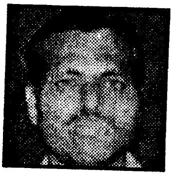

जोधपुर- श्री रोशन जी मेहता सुपुत्र श्री मोहनमल जी मेहता, जोधपुर का ११ जून २००६ को स्वर्गगमन हो गया। गुरु हीरा-गुरु मान एवं संत-सतीवृन्द के प्रति श्रद्धानिष्ठ मेहता सा. का जीवन धर्मनिष्ठ होने के साथ सरलता, संतोष एवं सादगी से ओतप्रोत था।

जलगाँव- सौ. सूरजबाई धर्मसहायिका श्री लखमीचन्द जी चोरडिया 'पाचोरा

वाले' हाल निवासी करही तह. महेश्वर (म.प्र.) का ७४ वर्ष की आयु में व्रत-प्रत्याख्यानों के साथ समाधिभावों में १४ जून २००६ को देहावसान हो गया। आपने दो मासखमण तथा ११ अठाई तप किए थे तथा आपका जीवन ममता एवं करुणा से ओतप्रोत था। आपका धर्मप्राण व्यक्तित्व प्रेरणास्पद था।

चेन्नई- सुश्रावक श्री सोहनलाल जी रेड का निधन २ जुलाई २००६ को चेन्नई में हो

गया। आप मादलिया संघ के उपाध्यक्ष थे तथा मरुधर केसरी श्री मिश्रीमल जी म.सा. के परम भक्त थे। मादलिया में जो भी धार्मिक एवं सार्वजनिक कार्य होते थे, आपकी उसमें प्रमुख भूमिका रहती थी। संत-सतियों की सेवा में आप सदैव तत्पर रहते थे। सामायिक किये बिना मुँह में पानी तक नहीं डालते थे। आप धर्मपरायण, सरलस्वभावी एवं मिलनसार थे। अपने पीछे आप भरापूरा परिवार छोड़कर गए हैं।

जोधपुर- श्रावकरत्न श्री उगमराज जी सावा सुपुत्र स्व. श्री फतेहराज जी सावा का १८ जुलाई २००६ को स्वर्गवास हो गया। गुरु हीरा-गुरु मान एवं संत-सतियों की सेवा-भक्ति में अग्रणी रहने वाले श्री उगमराज जी का जीवन सरलता, संतोष एवं सादगी से ओतप्रोत रहा।

जोधपुर- सुश्रावक श्री चन्दनराज जी मेहता सुपुत्र स्व. श्री भेरूराज जी मेहता का १६ जुलाई २००६ को मुम्बई में आकस्मिक निधन हो गया। आप धर्मनिष्ठ एवं गुरुदेवों के प्रति श्रद्धाशील सुश्रावक थे।

अहमदाबाद- सुश्राविका श्रीमती मीना बेन धर्मपत्नी अशोक कुमार जी नाहर निवासी अजमेर का ४६ वर्ष की उम्र में कैंसर के कारण ३० जून २००६ को मणिनगर, अहमदाबाद में निधन हो गया। आपके पूरा परिवार एवं पीहर पक्ष दोनों की गुरु हस्ती एवं गुरु हीरा के प्रति प्रगाढ़ भक्ति है। आपने मृत्यु पूर्व ही अपनी डायरी में मृत्यु को महोत्सव मनाने एवं कोई आरम्भ-समारम्भ नहीं करने की अपील की थी। आपकी धर्म भावना एवं पीड़ा सहन करने की क्षमता अनुकरणीय रही। आपने प्रत्येक शोक मनाने वाले को एक पच्चक्खाण अवश्य लेने की सलाह दी है।

बीकानेर- धर्मनिष्ठ, सरलमना सुश्रावक श्री मोहनलाल जी सेठिया सुपुत्र स्व. श्री

जेठमल जी सेठिया सुपौत्र श्री अगरचन्द जी भैरोंदान जी सेठिया, बीकानेर का ७८ वर्ष की आयु में चेन्नई में २ जुलाई २००६ को संथारे सहित पंडितमरण हो गया। आपके कई वर्षों से अनेक व्रत-प्रत्याख्यान थे। धर्म पर एवं आचार्य श्री १००८ श्री रामलाल जी म.सा. के प्रति अटूट आस्था व भक्ति थी। आप श्री साधुमार्गी जैन बीकानेर श्रावक संघ के अध्यक्ष भी रहे।

चेन्नई- सुश्राविका श्रीमती भंवरीबाई रूणवाल (धर्मपत्नी स्व. श्री अमरचन्द जी रूणवाल-बर) का २४ अप्रेल को स्वर्गवास हो गया। श्राविकारत्न नित्यप्रति सामायिक करती थी एवं चौविहार, जमीकन्द के त्याग, लिलोती की मर्यादा के साथ उनके जीवन में धर्म के प्रति अनुराग था। उनकी तपस्वीराज पूज्य श्री चम्पालाल जी म.सा. के प्रति अनन्य भक्ति थी। *-धर्मचन्द खारीवाल*

उदयपुर- बड़ी सादड़ी निवासी श्री सुजानमल जी मेहता सुपुत्र स्व. श्री फतहलाल जी

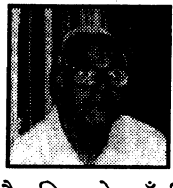

मेहता, हाल मुकाम उदयपुर का देहावसान २० जून २००६ को हो गया। ७३ वर्षीय श्री मेहता जी स्व. श्री मोहनलाल जी मेहता के लघुभ्राता एवं सज्जनराज जी मेहता के ज्येष्ठ भ्राता थे। श्री वर्द्धमान हिन्दी हाई स्कूल, रायचूर (कर्नाटक) में वर्षों तक शैक्षणिक सेवाएँ दीं। सामायिक-स्वाध्याय के धनी, सुश्रावक, प्रखर वक्ता एवं कर्मठ कार्यकर्ता थे। आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा. के रायचूर चातुर्मास में आपकी संघ समर्पित सेवाएँ सराहनीय रहीं। आप दो संस्कारी पुत्रों महावीर जी एवं प्रकाश जी तथा धर्मपत्नी, पोते-पोती, दोहिते-दोहिती सहित भरापूरा संस्कारित परिवार छोड़ गए हैं।

जयपुर - श्रीमती एवं श्री महिपाल जी जैन, मानसरोवर, जयपुर का सड़क दुर्घटना में आकस्मिक निधन हो गया। वे दोनों धर्मनिष्ठ, श्रद्धानिष्ठ एवं कर्त्तव्यपरायणता के साथ देव, गुरु एवं धर्म के प्रति समर्पित थे।

धुलिया- सुश्रावक श्री स्वरूपचन्द ज़ी श्यामलाल जी छाजेड़ का ६६ वर्ष की वय में स्वर्गवास हो गया। आप दुधेड़िया स्कूल के प्रधानाध्यापक रहे थे। आप नियमित सामायिक करते थे तथा जीवन का अधिकांश समय समाज-सेवा में लगाते थे।

रायपुर- सुश्रावक श्री नेमीचन्द जी नाहटा सुपुत्र स्व. श्री प्रतापचन्द जी नाहटा

(पंडरभट्ठा) का संथारा सहित ६ जुलाई २००६ को ७२ वर्ष की आयु में निधन हो गया। आप अत्यंत सरलमना, उदार एवं धार्मिक भावनाओं से ओतप्रोत थे। संत-सतियों की सेवा में सदैव अग्रणी रहते थे। आप उपाध्याय प्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. के संसार पक्षीय बहनोई थे। महासती श्री आदर्श प्रभाजी म.सा. ने आपको त्याग-प्रत्याख्यान कराकर मांगलिक श्रवण कराया। आप अपने पीछे ४ सुपुत्र, ४ सुपुत्री और पौत्र आदि का भरापूरा संस्कारवान परिवार छोड़कर गये हैं। *-दीपक बाफना*

भण्डारा- वयोवृद्ध समाजसेवी श्री भंवरलाल मुणोत सुपुत्र श्री मगनमल जी मुणोत निवासी पीपाड़ हालमुकाम भण्डारा (महा.) का ८२ वर्ष की उम्र में संथारा सहित समाधि मरण ५ जुलाई ०६ को हो गया। आप नियमित सामायिक-स्वाध्याय करते थे तथा १२ व्रतधारी, मिलनसार, स्नेहशील, सरलमना, धर्मनिष्ठ श्रावक थे।

-ललित कोठारी

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जिनवाणी तथा अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

आगामी पर्व

भाद्रपद कृष्णा ८	बुधवार, १६.०८.२००६	अष्टमी
भाद्रपद कृष्णा १३	सोमवार, २१.०८.२००६	पर्युषण पर्व प्रारम्भ
भाद्रपद कृष्णा १४	मंगलवार, २२.०८.२००६	चतुर्दशी
भाद्रपद कृष्णा ३०	बुधवार, २३.०८.२००६	पक्खी
भाद्रपद शुक्ला ४	सोमवार, २८.०८.२००६	संवत्सरी महापर्व
भाद्रपद शुक्ला ८	शुक्रवार, ०१.०९.२००६	अष्टमी
भाद्रपद शुक्ला १४	बुधवार, ०६.०९.२००६	चतुर्दशी
भाद्रपद शुक्ला १५	गुरुवार, ०७.०९.२००६	पक्खी

साभार-प्राप्ति-स्वीकार

५००/- रुपये जिनवाणी पत्रिका की आजीवन-सदस्यता हेतु प्रत्येक

१०४९७ श्री उम्मेदसिंह जी सिंघवी, जयपुर(राज.)
१०४९८ श्रीमती कोकिला जी जैन, जयपुर (राज.)
१०४९९ श्री विजयसिंह जी ढढ्ढा, जयपुर (राज.)
१०५०० श्री प्रवीण जी जैन, दिल्ली
१०५०१ Shri Ramesh chand Ji Maru, Agar, Shajapur (M.P.)
१०५०२ श्री नरेश कुमार जी गोखरू, देवली, टोंक (राज.)
१०५०३ सुश्री नेहा जी चौधरी, जयपुर (राज.)
१०५०४ श्री राजेन्द्र जी ताराचन्द जी जालोरी, परतवाड़ा, अमरावती (महा.)
१०५०५ श्री राजेन्द्र जी स्वरूपचन्द जी बरडिया, परतवाड़ा, अमरावती (महा.)
१०५०७ श्री योगेन्द्र जी जैन, जयपुर (राज.)
१०५०८ श्री संजय जी नाहर, नई दिल्ली
१०५०९ श्री समरतमल जी लुणावत, पूना (महा.)
१०५१५ श्री नरेन्द्र जी जैन, गोराया, जालन्धर(पंजाब)
१०५१६ श्री डी. आर. भंसाली, कोलकाता (प.बंगाल)
१०५१७ श्री कुमारपाल जी जैन, जयपुर (राज.)
१०५१८ श्री जिनेन्द्र जी कांकरिया, थाने, मुम्बई (महा.)
१०५१९ श्री कर्णसिंह जी रांका, भीलवाड़ा(राज.)
१०५२३ श्री पारसमल जी डोसी, बैंगलोर (कर्नाटक)
१०५२४ श्री डी. त्रिलोकचन्द जी जैन, चेन्नई (तमि.)
१०५२५ श्री डी. दलीचन्द जी नाहटा, के.जी.एफ (कर्नाटक)
१०५२६ श्री तेजकरण जी जैन (सिपानी), बुंदेर, मंगलोर (कर्नाटक)

अर्द्धमूल्य योजना के अन्तर्गत आजीवन सदस्यता

(सुश्राविका श्रीमती कपूरीदेवी जैन, अलीगढ़-टोंक की स्मृति में)

१०५०६ श्री रूपराज जी जीरावला, जोधपुर (राज.)
१०५१० Shri Rakesh Ji Katariya, Chennai (T.N.)
१०५११ श्री जिनेश जी कोठारी, जोधपुर (राज.)
१०५१२ श्री महेश जी कोठारी, जोधपुर (राज.)
१०५१३ श्री सिद्धार्थ जी लुणावत, जोधपुर (राज.)
१०५१४ श्री विनोद कुमार जी जैन, अलीगढ़, टोंक (राज.)
१०५२० श्री पदमचन्द जी जैन, मुम्बई(महा.)
१०५२१ श्री प्रवीण कुमार जी जैन, आलनपुर, सवाईमाधोपुर(राज.)
१०५२२ श्री नरेश जी जैन, जोधपुर (राज.)

जिनवाणी हेतु साभार

५१००/- श्री प्रवीण कर्णावट, मुम्बई, चाँदमल जी कर्णावट, उदयपुर के सुपौत्र चि. अभिषेक सुपुत्र श्री आनन्द जी कर्णावट का शुभ विवाह लास एंजिल्स (अमेरिका) की सौ. कां. दिपाली सुपुत्री श्री प्रदीप जी सेठिया, बीकानेर के संग सम्पन्न होने की खुशी में।

२०००/- श्री मोहरचन्द जी एवनकुमार जी, इन्दरचन्द जी, अशोक कुमार जी नाहटा, रायपुर (छत्तीसगढ़), पूज्य पिताजी श्री नेमीचन्द जी नाहटा का दिनांक ६.७.०६ को स्वर्गवास होने पर उनकी पुण्यस्मृति में भेंट।

११००/- श्री मांगीलाल जी, जवरीमल जी, नेमीचन्द जी, प्रकाशचन्द जी, नवरतनमल जी, अमितकुमार जी चौपड़ा, जोधपुर, अपने पूज्य पिताजी श्री बाबूलाल जी सा चौपड़ा की पावन स्मृति में भेंट।

१०००/- श्रीमती प्रेमकँवर जी धर्मपत्नी स्व. श्री सूरतराज जी सुराणा, जोधपुर, अपनी सुपौत्री सौ. कां. शिप्रा सुपुत्री श्री अशोक-सोहिनी जी सुराणा, दिल्ली का चि. सुधांशु सुपुत्र श्री जगरूपचन्द जी जैन के संग शुभ विवाह सम्पन्न होने की खुशी में।

५५५/- श्री महेन्द्रमल जी गांग, जोधपुर, हाल मुकाम सूरत, अपने सुपुत्र श्री अभिषेक जी का एम.बी.ए.(आई.एस.बी., हैदराबाद) में पास होने के उपलक्ष्य में।

५००/- श्रीमती दीप्ति जी अभिनव जी पारख, जयपुर, श्री प्रशान्त जी पारख की पुण्यस्मृति में।

५००/- श्री राजेश कुमार जी कटारिया, दुर्ग, श्री कन्हैयालाल जी का दिनांक १७.५.०६ को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्यस्मृति में।

५००/- श्री आर. भागचन्द जी जैन, त्रिवल्लूर, श्रीमती पुष्पाबाई धर्मपत्नी श्री भागचन्द जी जैन, सुपुत्र चि. सुरेश कुमार का शुभ विवाह दिनांक ७.७.२००६ को सौ. कां. ममता के साथ सम्पन्न होने की खुशी में।

५००/- श्री महावीरचन्द जी संकलेचा, मैसूर, सौ. स्मिता सुपौत्री श्री नेमीचन्द जी चौधरी, सुपुत्री श्री शांतिलाल जी चौधरी का शुभ विवाह चि. राकेश कुमार सुपुत्र श्री मांगीलाल जी बोहरा, बेंगलोर के संग होने की खुशी में।

५००/- श्री जयन्तिलाल जी महावीरचन्द जी रेड, चेन्नई, अपने पूज्य पिताश्री श्री सोहनलाल जी रेड की पुण्यस्मृति में भेंट।

५००/- श्री महावीरचन्द जी, आशीष कुमार जी नाहटा, बंगारपेठ, परमपूज्य श्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. का बंगारपेठ में चातुर्मास होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

५००/- श्री महावीरचन्द जी आशीष कुमार जी नाहटा, बंगारपेठ, सुपुत्री सौ. सुमन का विवाह चि. उदयराज जी धोका, मैसूर के साथ सम्पन्न होने की खुशी में।

५००/- श्री विमलचन्द जी, रिखबचन्द जी, सुभाषचन्द्र जी, अशोक कुमार जी, श्रेणिक कुमार जी धोका, मैसूर, पूज्य आचार्य भगवन्त श्री हीराचन्द्र जी म.सा. का बंगारपेठ में चातुर्मास होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

५००/- श्री सुरेशकुमार जी नरेशकुमार जी गांग, जोधपुर, अपने पूज्य पिताजी सोहनमल जी गांग की चौथी पुण्यतिथि पर भेंट।

२५१/- श्री ललित जी जैन सुपुत्र स्व. श्री सुरेशचन्द जी जैन, सुमेरगंजमण्डी, बून्दी का शुभ विवाह दिनांक २.३.०६ को सौ. कृतिका के संग सम्पन्न होने की खुशी में।

२५१/- श्री दिलीपचन्द भण्डारी, पूज्य पिताजी स्व. श्री सुगनचन्द जी भंडारी की पुण्यस्मृति में।

२५१/- श्री अशोक जी, धर्मचन्द जी, मदनलाल जी जैन, जयपुर, अपने पूज्य पिताजी श्री मुंशीलाल जी जैन का परलोक गमन दिनांक २९.५.०६ को हो जाने पर उनकी पुण्यस्मृति में।

२५१/- श्री जिनेन्द्र नाथ जी मोदी, जोधपुर, अपने सुपुत्र श्री निलेश मोदी सुपौत्र स्व. श्री सोलेश्वरनाथ जी मोदी के सी.ए. बनने की खुशी में।

२५१/- श्री अभयराज जी चोरडिया, जलगाँव, अपने अनुज श्री ईश्वर चोरडिया एवं मंगला जी चोरडिया की शादी की २५वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में।

२५१/- श्री अचलराज जी डागा, जितेन्द्रराज जी, सुरेशराज जी व हर्ष जी डागा, जोधपुर, पूज्य पिताजी स्व. श्री रिखबचन्द जी डागा, पूज्य माताजी स्व. श्रीमती बृजकंवर जी डागा तथा धर्मपत्नी स्व. श्रीमती अकलकँवर जी डागा की पुण्यस्मृति में भेंट।

जीवदया हेतु साभार

१००१/- श्री राजेन्द्र कुमार जी जैन (सी.ए.), मुम्बई, श्री रूपराज जी मेहता एवं परिवार, जोधपुर।

१००१/- श्रीमती पुष्पा जी लोढ़ा, श्री सुखीन्द्र जी लोढ़ा, मुम्बई, स्व. श्री करोड़ीमल जी लोढ़ा की पुण्यस्मृति में भेंट।

२५१/- श्री दिलीपचन्द जी भण्डारी, पुत्र स्व. सुगनचन्द जी भण्डारी द्वारा अपने पिताश्री की पुण्यतिथि १७.८.०६ के उपलक्ष्य में।

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर को प्राप्त साभार

२०००/- श्री मोहरचन्द जी, एवनकुमार जी, इन्दरचन्द जी, अशोक कुमार जी नाहटा, रायपुर (छत्तीसगढ़), पूज्य पिताजी श्री नेमीचन्द जी नाहटा का दिनांक ६.७.०६ को स्वर्गवास होने पर उनकी पुण्यस्मृति में भेंट।

११००/- श्री मांगीलाल जी, जवरीमल जी, नेमीचन्द जी, प्रकाशचन्द जी, नवरतनमल जी, अमितकुमार जी चौपड़ा, जोधपुर, अपने पूज्य पिताजी श्री बाबूलाल जी चौपड़ा की पावन स्मृति में।

श्राविका मण्डल शाखा जयपुर हेतु साभार

२१००/- श्रीमती अरुणा जी महेन्द्र जी कर्णावट, जयपुर, 'सुपौत्र रत्न' प्राप्त होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद् को आचार्य हस्ती मेधावी युवारत्न छात्रवृत्ति हेतु सहयोग राशि

८४०००/- श्री हरीश कुमार जी यशकुमार जी कवाड़, पुन्नमल्लै, चेन्नई, सात छात्रों हेतु राशि।

१२०००/- श्री मोहनलाल जी बोहरा, तिरुवन्नामल्लै, एक छात्र हेतु राशि।

१२०००/- श्री पारसमल जी बोहरा, तिरुवन्नामल्लै, एक छात्र हेतु राशि।

१२०००/- श्री किशनलाल जी कोठारी, बैंगलोर, एक छात्र हेतु राशि।

१२०००/- श्री प्यारेलाल जी कोठारी, पाड़ी, चेन्नई, एक छात्र हेतु राशि।

आचार्य हस्ती जीवन-दर्शन स्वाध्याय प्रतियोगिता

युगद्रष्टा-युगमनीषी अध्यात्मयोगी महापुरुष आचार्यप्रवर पूज्य श्री १००८
श्री हस्तीमल जी म.सा. के जीवन-चरित्र

'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं'

पर आधारित खुली पुस्तक प्रतियोगिता में भाग लीजिए

प्रथम पुरस्कार- १ लाख रुपये

अन्य विविध पुरस्कार- द्वितीय-३१,०००/-, तृतीय-२१,०००/-, चतुर्थ-१५,०००/-, पंचम-११,०००/-, षष्ठ-७,०००/-, सप्तम-५,०००/-अष्टम-३,०००/, नवम-२,०००/-, दशम-१०० प्रतियोगियों में प्रत्येक को १,०००/-

शीघ्र प्रतियोगी प्रोत्साहन पुरस्कार रुपये ५०/-प्रत्येक

सौजन्य :

श्रीमती शरद चन्द्रिका मुणोत की स्मृति में श्री मोफतराज मुणोत परिवार, मुम्बई

प्रतियोगिता की उपयोगिता-

अपने जीवन का निर्माण, आत्मशक्ति एवं आत्मविश्वास में अभिवृद्धि, आदर्श साधु-जीवन का बोध, जीवन की वैयक्तिक-पारिवारिक एवं सामाजिक समस्याओं का आध्यात्मिक समाधान, शान्ति एवं आनन्द का अनुभव।

प्रश्न-पुस्तिका वितरण की अन्तिम तिथि	- ६ सितम्बर २००६
शीघ्र प्रतियोगियों हेतु अन्तिम तिथि	- ५ नवम्बर २००६
उत्तरपुस्तिका जमा कराने की अन्तिम तिथि	- २ जनवरी २००७
परिणाम घोषणा	- २९ अप्रेल २००७

प्रतियोगिता हेतु ९५० पृष्ठ का विशाल ग्रन्थ 'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं २५०/- के स्थान पर मात्र १००/- में तथा प्रश्न पुस्तिका एवं उत्तरपुस्तिका-३०/- में उपलब्ध।

प्रश्नपुस्तिका में लगभग ६०० प्रश्न हैं। प्रश्नपुस्तिका दो भागों में विभक्त है। प्रथम खण्ड, पंचम खण्ड एवं आवरण पृष्ठ आदि के प्रश्न प्रथम भाग में तथा द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ खण्ड के प्रश्न द्वितीय भाग में हैं।

डाक अथवा कोरियर से मंगवाने पर-

ग्रन्थ-१००/-+ डाक व्यय ६०/-= कुल १६०/-

प्रश्न पुस्तिका ३०/- + डाक व्यय १०/- = कुल ४०/-

ग्रन्थ एवं प्रश्न-पुस्तिका मंगवाने का पता- अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-३४२००१ (राज.), फोन नं. ०२९१-२६३६७६३, २६२४८९१, २६४१४४५, फैक्स-२६३६७६३

आचार्य हस्ती जन्म-शताब्दी-वर्ष २०११ के उपलक्ष्य में
गजेन्द्र निधि के सान्निध्य में अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा

आचार्य हस्ती मेधावी युवारत्न छात्रवृत्ति योजना

योजना की उपादेयता- शैक्षणिक उन्नयन, चारित्र निर्माण एवं चहुँमुखी विकास व प्रतिभाशाली युवाओं की खोज की दृष्टि से यह योजना इस वर्ष जुलाई २००६ से आरम्भ की गई है। इस योजना के अन्तर्गत ५ वर्षों में ५०० छात्रों को १०००/- प्रतिमाह की छात्रवृत्ति प्रदान की जाएगी।

योग्यता- (अ) आवेदक की आयु १२ से अधिक एवं ३० वर्ष से कम होनी चाहिए। (ब) आवेदक द्वारा व्यावहारिक शिक्षण परीक्षा में प्राप्तांक ६० प्रतिशत से अधिक हो। (स) आवेदक रत्नसंघ परिवार का सदस्य होना चाहिए। (द) आवेदक अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की प्रतिवर्ष होने वाली जनवरी व जुलाई माह की परीक्षा में से किसी एक परीक्षा को ६० प्रतिशत से अधिक अंकों से उत्तीर्ण किया हुआ होना चाहिए। प्रारम्भिक वर्ष में उत्तीर्ण करना होगा।

नियमावली- (१) आवेदक को प्रतिदिन १ नवकार मंत्र की माला जपने का संकल्प करना होगा। (२) आवेदक सदाचारी हो एवं उसे सप्त कुव्यसन का त्याग करना होगा। (३) आवेदक एक महीने में ५ सामायिक करने का संकल्प लेकर करने वाला हो। (४) आवेदक को अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद्/स्वाध्याय संघ, जोधपुर द्वारा आयोजित केन्द्रीय शिविर/क्षेत्रीय शिविर में वर्ष में एक बार भाग लेना अनिवार्य होगा।

आवेदनपत्र- (अ) आवेदन पत्र अपने क्षेत्र अथवा नजदीकी श्री जैन रत्न युवक परिषद् की शाखा से अथवा अ.भा. **श्री जैन रत्न युवक परिषद्, घीड़ों का चौक, जोधपुर (राज.)** से प्राप्त कर सकते हैं तथा पूर्ण भरा हुआ आवेदन पत्र प्रधान कार्यालय जोधपुर, ०२९१-२६४१४४५ या चयन समिति के संयोजक **Sh. Budhmal Bohra, Flat No. 211, Akash Ganga Apartment No. 19, Flowers Road, Kilpauk, Chennai-10, Ph. 044-26428868, Mb. 094442-35065** के पते पर अथवा युवक परिषद् प्रधान कार्यालय में प्रेषित करें।

अर्थ सहयोग- वात्सल्य व सद्भाव से परिपूर्ण इस पुनीत कार्य व योजना की सफलता के लिए उदारमना कृपया मुक्तहस्त से अर्थ सहयोग एक छात्र के लिए १२००० की राशि अथवा अधिक के लिए इसके गुणक में राशि **गजेन्द्र निधि आचार्य हस्ती स्कालरशिप फण्ड** के नाम से चैक/डी.डी. (८०जी के तहत कर छूट लाभ) निम्न से सम्पर्क कर भिजवायें।

अर्थ सहयोग हेतु सम्पर्क सूत्र- श्री अशोक कवाड़, चेन्नई-९३८१०४१०९७, श्री अशोक चोरडिया, जोधपुर-९४१४१२९१६२, श्री मनोज जैन, किशनगढ़-९४१४०११००९, प्रमोद जी हीरावत, जयपुर-९३१४५०७३०३, श्री कुशल जी गोटेवाला, सवाईमाधोपुर-९४१४०३०५७२, श्री प्रवीण जी कर्णावट, मुम्बई-९८२१०५५९३२, श्री हरिश जी सांखला, बैंगलोर-९३४१८४५०००, श्री सुमतिचन्द जी मेहता, पीपाड़-९४१४४६२७२९, श्री महेन्द्र जी बाफना, जलगाँव-९४२२७७३४१।

समता' मोक्ष का साधन है तो उसका उलटा 'तामस' नरक का द्वार है।
- आचार्य श्री हस्ती

पारसमल सुरेशचन्द कोठारी

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

प्रतिष्ठान

KOTHARI FINANCERS

27, Chandrappan Street
Chennai-600079(T.N.)
Ph.# 25258436, 25298130

Branches:

Bhagawan Motors, Chennai-53, Ph.# 26251960
Bhagawan Cars, Chennai-53, Ph.# 26243455/66
Balaji Motors, Chennai-50, Ph.# 26247077
Padmavati Motors, Jafar Kan Peth, Chennai, Ph.# 24854526

JAI GURU HASTI

JAI GURU HEERAMAN

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

Live & Let Live

Prithvi Exchange

A 100% Money Changer

A DIVISION OF PRITHVI SOFTECH LIMITED

REGD. OFFICE : 33, Montieth Road, Egmore, Channai-600008

CHENNAI	:	044-28553185, 52145478
BANGALORE	:	080-22103267, 22103268
HYDERABAD	:	040-23414333, 23414777
GOA	:	0832-2420675, 2231190

www.prithvifx.com

P. DELICHAND KAVAD

SURESH KAVAD
NAVARATHAN KAVAD
RAVINDRA KAVAD
ASHOK KAVAD

158, Trunk Road, Poonamallee, Chennai-600 056
Phone No.: 044-2627 3165, 2627 4165

Jai Guru Hasti ! Jai Mahaveer ! Jai Guru Heera Maan !

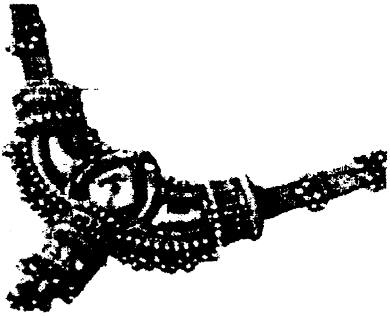

Best Compliments from

GURU HASTI GOLD PALACE

(Govt. Authorised Jewellers) (916.KDM)

22 Ct. Gold! 24 Ct. Trust!

No.4, Car Street,
Poonamallee, Chennai - 600 056.
Phone : 26272609, 55666555.

गुरु हस्ती के दो फरमान।
सामायिक स्वाध्याय महान॥

Guru Hasti Bankers :

P. MANGILAL HARISH KUMAR KAVAD

No.5, Car Street,
Poonamallee, Chennai - 600 056.
Phone : 26272906, 55689588.

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

जीवन को बनाने या बिगाड़ने का सारा दायित्व चरित्र पर ही निर्भर है।

—आचार्य श्री हस्ती

With Best Compliments From :

BRIGHT STAR DIAMOND CO., LTD.

Diamond & Precious Stones

Ghisalal Gyanchand Prakashchand Bamb

410 The Executive House,
12th Floor, Suite 160-161,
Suriwongse Road,
BANGKOK 10500, Thailand
G.P.O. Box No. 2088

Tel	:	237-8051, 237-8052 234-7648
Fax	:	(662) 237-6110
Res	:	437-0910
Mobile	:	01-6285733

Gurudev

SURANA

INDUSTRIES LIMITED

SIL

Manufacturers & Exporters of

Symbolises the Aspiration of Discerning Steel Buyers !

Premium Quality Steels, viz.,
HSD / CTD Bars, MS Rounds
Structurals Like Flats, Channels
Angles and Squares

Always Use SURANA STEELS to Highlight your House/Industry

Regd. Cum Corporate Head Office

29, Whites Road, II Floor Royapettah, Chennai 600 014.
Grams : **GURUHASTI**
Phone : 28525127 (3 Lines) Fax : 044 28521143
E-mail : suranast@vsnl.com
Website : www.suranaind.com

Works

F-67, 68 & 69 SIPCOT Industrial Complex
Gummidipoondi 601 201, Tiruvallur Dist. Tamilnadu
Phone : 954119 222881 Telefax : 954119 222880

Sales Yard

30, G.N.T. Road, Madhavaram,
Chennai 600 110
Phone : 25375531/32/33 Fax : 044 25375400

Jai Guru Hasti Jai Guru Heera Jai Guru Man

विश्व को आज शस्त्रधारी सैनिकों की नहीं अपितु
शास्त्रधारी सैनिकों की आवश्यकता है।

आचार्य श्री हस्ती

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

With Best Compliment From :

NARENDRA HIRAWAT

Flat No. 1, Building No. 2
Navjeevan Society,
Senapati Bapat Marg,
Matunga (West), Mumbai-400016

Trin-Trin

Matunga Office : 022-56669707, 24370713
Opera House Office : 022-30024281
Mobile : 98210-40899

जय गुरु हस्ती जय गुरु हीरा जय गुरु मान

जो संघ में भक्ति रखता है और शासन की उन्नति करता है,
वह प्रभावक श्रावक है।
आचार्य श्री हस्तीमलजी.म.सा.

With Best Compliments From :

MJ

MAHENDRA JEWELLERS

No. 1000-1001.
Thiruvottiyur High Road
Kaladipet, Chennai-600 019

Phone : (O) 044-25991313, 25992300, 25992400
Fax : 044-25994466
Phone : (R) 044-25993671, 25993101, 25995588

आर.एन.आई. नं. 3653/57 डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-018/2006-08

Presenting
Premium properties by Kalpataru

KALPATARU ROYALE

Near Cine Planet, Off Sion Circle,
Sion

KALPATARU ESTATE

Opp. Fantasyland,
Andheri (E)

SIDDHACHAL

Pokhran Road No.2,
Thane (W)

Other Projects :

Kalpataru Habitat, **Parel** • Kalpataru Gardens, **Kandivli (E)**
Tarangan, **Thane (W)** • Kamdhenu, **Mulund (E)**
Kalpataru Regency II, **Pune**

KALPA-TARU

111, Maker Chambers IV, Nariman Point, Mumbai - 400 021. India
Tel.: 022-2282 2888, 2281 7171 • Fax: 022-2204 1548, 2288 4778
Email : sales@kalpataru.com • Website : www.kalpataru.com

स्वामी–सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के लिये मुद्रक संजय मित्तल द्वारा दी डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, एम.एस.बी. का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशक प्रेमचन्द जैन, बापू बाजार, जयपुर से प्रकाशित। सम्पादक डॉ. धर्मचन्द जैन।